युग निर्माण योजना

सितम्बर - 2025

₹ 13 – एक प्रति । ₹ 150 – वार्षिक । वर्ष – 62 – अंक – 3

6 – परम वंदनीया माताजी के अनमोल विचार
13– सुधारकों की राह में काँटों की भरमार
23– दिव्य प्रकाश के स्रोत
31– व्यस्त रहिए, चिंता से छुटकारा पाइए

संस्थापक-संरक्षक

इस पत्रिका में प्रकाशित सभी सामग्री युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, अखण्ड ज्योति, शांतिकुंज के संस्थापक-संरक्षक, चारों वेद, 108 उपनिषद, 6 दर्शन, स्मृतियों, 18 पुराणों के भाष्यकार, 3200 पुस्तकों के लेखक, प्रतिबंधित गायत्री मंत्र को सर्वसुलभ कराने वाले, महान स्वतंत्रता सेनानी, राष्ट्रसंत वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा पं० श्रीराम शर्मा आचार्य एवं शक्तिस्वरूपा वंदनीया माता भगवती देवी शर्मा के विचार, साहित्य एवं दर्शन पर आधारित, संपादित है।

उद्देश्य

- स्वस्थ शरीर
- स्वच्छ मन
- सभ्य समाज
- मनुष्य में देवत्व का उदय
- धरती पर स्वर्ग का अवतरण
- आत्मवत् सर्वभूतेषु
- वसुधैव कुटुंबकम्

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

परमपूज्य गुरुदेव द्वारा 24-24 लाख के चौबीस गायत्री महापुरश्चरण के पश्चात 24 दिन के जल उपवास के बाद प्रथम गायत्री मंदिर की स्थापना, 750 वर्ष पुरानी हिमालय की सिद्ध अखण्ड अग्नि में नियमित यज्ञ, 2400 तीर्थों की रज एवं जल, अखण्ड दीप, निरंतर गायत्री साधना से ऊर्जान्वित सिद्धपीठ, प्रखर प्रज्ञा–सजल श्रद्धा, आधुनिक चिकित्सा सुविधासंपन्न पारमार्थिक चिकित्सालय, निःशुल्क चिकित्सा शिविर, युग निर्माण विद्यालय, गोशाला। युग निर्माण मिशन के साहित्य का विशाल प्रकाशन-वितरण तंत्र। युग निर्माण योजना (हिंदी), युग शक्ति गायत्री (गुजराती) पत्रिकाओं का प्रकाशन। दिव्य वातावरण में नौ दिवसीय गायत्री साधना शिविरों का आयोजन (पूर्व अनुमति आवश्यक)।

युग निर्माण मिशन के प्रमुख संस्थान

- जन्मभूमि आँवलखेड़ा, आगरा
- अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा
- युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा
- श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, शांतिकुंज, हरिद्वार
- ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, हरिद्वार
- देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार
- गायत्री ज्ञानपीठ, अहमदाबाद
- देश-विदेश में 4000 से अधिक गायत्री शक्तिपीठ, चेतना केंद्र, प्रज्ञा संस्थान।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्
उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अंतरात्मा में धारण करें । वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ।

युग निर्माण योजना

नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान का मासिक पत्र

संस्थापक / संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
ईश्वर शरण पाण्डेय
सहसंपादक
सूर्यमणि तिवारी
दीनदयाल अमृते
कार्यालय
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
पि० को० 281003
दूरभाष नंबर
(0565) 2530115, 2530128, 2530399,
मो० 09927086287, 09927086289
(इन पर एस.एम.एस. न करें)
समय : प्रातः 9 से सायं 5 बजे
ई-मेल :
yugnirman@yugnirmanyojna.org
Website : www.yugnirmanyojna.org
सितंबर—2025
प्रकाशन तिथि : 17.08.2025
वर्ष : 62 अंक : 3
वार्षिक शुल्क : 150
वार्षिक शुल्क रजिस्टर्ड डाक से 390 रु०
आजीवन (बीसवर्षीय) 3000 रु० + 240 रु० (वार्षिक, रजिस्टर्ड डाक से)
वार्षिक विदेश : 2200 रु०

प्रतिकूलताओं का सामना कीजिए

अपने प्रियजन के वियोग से हम अधीर हो जाते हैं, क्योंकि वह हमें छोड़कर चल दिया। इस विषय में अधीर होने से क्या काम चलेगा ? क्या वह हमारी अधीरता को देखकर लौट आएगा ? यदि नहीं, तो हमारा अधीर होना व्यर्थ है। फिर हमारे अधीर होने का कोई समुचित कारण भी तो नहीं, क्योंकि जिसने जीवन धारण किया है, उसे मरना तो एक दिन है ही। जो जन्मा है, वह मरेगा भी।

संपूर्ण सृष्टि के पितामह ब्रह्मा हैं। चराचर सृष्टि उन्हीं से उत्पन्न हुई है। अपनी आयु समाप्त होने पर वे नहीं रहते, क्योंकि वे भी भगवान विष्णु की नाभि-कमल से पैदा हुए हैं। अतः महाप्रलय में वे भी विष्णु के शरीर में विलीन हो जाते हैं। जब यह अटल सिद्धांत है कि जीवित प्राणी का नाश होगा ही, तो फिर हम उस अपने प्रिय का शोक क्यों करें ? उसे तो मरना ही था, आज नहीं तो कल और कल नहीं तो परसों। सदा कोई जीवित रहा भी है, जो वह रहता ? जो जहाँ से आया था, चला गया। एक दिन हमें भी जाना है। इसलिए जो दिन शेष हैं, उन्हें धैर्य के साथ उस परमपिता परमात्मा के गुणों के चिंतन में लगाएँ।

शरीर के व्याधिग्रस्त होते ही हम विकल हो जाते हैं। विकल होने से आज तक कोई रोगमुक्त हुआ है ? यह शरीर तो व्याधियों का घर है। जाति, आयु, भोग को साथ लेकर ही तो यह शरीर उत्पन्न हुआ है। पूर्वजन्म के जो भोग हैं, वे तो भोगने ही पड़ेंगे। ❐

अनुक्रमणिका

- आवरण पृष्ठ—1 1
- आवरण पृष्ठ—2 2
- प्रतिकूलताओं का सामना कीजिए 3
- फल और सब्जियों में हैं भरपूर पोषक तत्त्व 5
- **महाप्रयाण दिवस पर** परमवंदनीया माताजी के अनमोल विचार 6
- समय प्रबंधन से तनाव-निवारण 9
- प्राकृतिक औषधि : करेला 10
- सुधारकों की राह में काँटों की भरमार 13
- **पितृपक्ष पर विशेष** पितरों के निमित्त पुण्यकर्म का सुअवसर 14
- पढ़ना भी एक कला 17
- **आत्मीय अनुरोध** समय को पहचानिए— भविष्य को सँवारिए 19
- **ज्ञातव्य** 21
- **शिक्षक दिवस पर विशेष** दिव्य प्रकाश के स्रोत 23
- योग से परिष्कृत मनोभूमि का निर्माण 26
- आडंबर रहित जीवन जिएँ 28
- व्यस्त रहिए, चिंता से छुटकारा पाइए 31
- पारिवारिक शिक्षा की अनिवार्यता 34
- गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण 37
- जन्मशताब्दी माताजी की (कविता) 38
- आवरण पृष्ठ—3 39
- आवरण पृष्ठ—4 40

सितंबर-अक्टूबर, 2025 के पर्व-त्योहार

बुधवार	03 सितंबर	जलझूलनी एकादशी
गुरुवार	04 सितंबर	वामन जयंती
शनिवार	06 सितंबर	अनंत चतुर्दशी
रविवार	07 सितंबर	महालयारंभ/महाप्रयाण दिवस वं. माताजी
गुरुवार	11 सितंबर	परमवंदनीया माताजी जयंती
सोमवार	15 सितंबर	मातृ नवमी
बुधवार	17 सितंबर	इंदिरा एकादशी
शुक्रवार	19 सितंबर	परमपूज्य गुरुदेव जयंती
रविवार	21 सितंबर	पितृमोक्ष अमावस्या
सोमवार	22 सितंबर	नवरात्रारंभ
गुरुवार	02 अक्टूबर	विजयादशमी/ गांधी-शास्त्री जयंती
शुक्रवार	03 अक्टूबर	पापांकुशा एकादशी
सोमवार	06 अक्टूबर	शरद्पूर्णिमा
मंगलवार	07 अक्टूबर	वाल्मीकि जयंती
शुक्रवार	10 अक्टूबर	करवा चौथ
सोमवार	13 अक्टूबर	अहोई अष्टमी
शुक्रवार	17 अक्टूबर	रमा एकादशी
रविवार	19 अक्टूबर	धनतेरस
सोमवार	20 अक्टूबर	रूप चतुर्दशी
मंगलवार	21 अक्टूबर	दीपावली
बुधवार	22 अक्टूबर	अन्नकूट/बेसतुबरस
गुरुवार	23 अक्टूबर	भाईदूज
रविवार	26 अक्टूबर	लाभ पंचमी
शुक्रवार	31 अक्टूबर	अक्षय नवमी

फल और सब्जियों में हैं भरपूर पोषक तत्त्व

प्रकृति की देन मानव जाति के लिए एक वरदान की तरह है—फल और हरे शाक-सब्जियाँ। इनमें पाए जाने वाले सैकड़ों प्रकार के फाइटोकैमिकल्स अनेक रोगों से बचाते हैं। इम्युनिटी बढ़ाते हैं। जब से मानव जाति सभ्यता के उच्च शिखरों की ओर बढ़ रही है, तब से निरंतर खान-पान की आदतों में बिना पोषक तत्त्वों के आहार खाने की ललक बढ़ने लगी है। फास्टफूड एवं मैदा, सफेद चीनी, तेल, घी में तले खाद्य आदि स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक आहार में लोग रुचि ले रहे हैं।

भूल सुधारने का समय—चाय, कॉफी कोल्डड्रिंक्स तथा बोतल बंद पेयों से लिवर, किडनी, हृदय एवं मस्तिष्क के रोगों के साथ आहारनलिका के रोगों में तथा कैंसर में वृद्धि हो रही है। यदि अब न सँभले तो हमें ऐसी महामारियाँ निगलती रहेंगी। इनसे लड़ने की प्राकृतिक ताकत हमारे अंदर प्राकृतिक खाद्यों से ही मिलेगी। परिष्कृत खाद्य, डिब्बाबंद, पैकेट बंद खाद्य से तो हमारी रोग-प्रतिरोधक क्षमता नष्ट हो जाएगी।

रसाहार के फायदे—रोगों की गंभीर अवस्था में रोगी को रसाहार, फलाहार द्वारा स्वास्थ्य-सुधार की ओर लाने का प्रयास होता है। इसमें चमत्कारिक लाभ भी मिलता है। स्विट्‌जरलैंड के एक प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ० बर्कर बैनर ने अपनी फूलती-फलती प्रैक्टिस छोड़कर प्राकृतिक कच्चे आहार, हरे शाक-सब्जी और ताजे फलों के रस पर आधारित 'आहार चिकित्सा' द्वारा जन-जन को रोगमुक्त करने के लिए ज्यूरिक में 'नेचुरोपैथी सेंटर' की स्थापना की, जहाँ महत्त्वपूर्ण परिणाम देखने को मिले।

हानिकारक औषधियों के दुष्प्रभाव को कम करने तथा शरीर की आंतरिक स्वच्छता के लिए फल और सब्जियों के रस का उपयोग किया जाता है।

खान-पान के व्यंजनों की बढ़ती संख्या, जिनमें स्वाद भले ही हो, परंतु शरीर के लिए पोषक-तत्त्वों से हीन हो तो वे हमारे किसी काम के नहीं हैं। आजकल देर रात तक होने वाली पार्टियों (दावतों) में बेहिसाब ठूँस-ठूँसकर खाने, खड़े-खड़े भोजन करने तथा बिना चबाए जल्दी-जल्दी खाने से हमारी जीवनशैली क्षतिग्रस्त हो गई है।

<u>प्राकृतिक कच्चा आहार, कच्ची सब्जियाँ,</u> ताजे फलों का रस, हरे शाक-सब्जियों का रस स्वास्थ्य प्रदान करता है; जबकि व्यर्थ के खान-पान की आदत से तो जीर्ण कब्ज, सिरदर्द, बवासीर, वातजन्य शारीरिक पीड़ा, अनिद्रा जैसे रोगों ने अपनी जड़ जमा ली है।

मनुष्य को छोड़कर सभी प्राणी अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार जो भी भोजन करते हैं, वह कच्चा ही होता है। मात्र मनुष्य जाति में ही भोजन पकाकर खाने की परंपरा चल पड़ी है।

शिकागो के डॉ० जार्ज जे० ड्रस का कहना है कि मानव जाति को प्राचीनकाल से ही पकाए हुए आहार का चसका लगा हुआ है। आज के अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोग पक्वाहार के सेवन का परिणाम हैं।

इस तथ्य पर सबको गौर करना चाहिए कि हमारे शरीर के सेल्स (कोश) का निरंतर हर क्षण निर्माण तथा पुराने सेल्स नष्ट होने का कार्य चलता रहता है, जिसके लिए आवश्यक पोषकतत्त्वों का होना हर दिन जरूरी है। ❒

महाप्रयाण दिवस पर

परमवंदनीया माताजी के अनमोल विचार

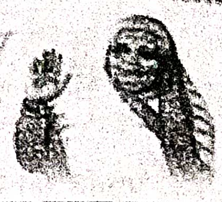

परमवंदनीया माताजी ने परिजनों को न केवल प्यार-दुलार दिया बल्कि सतत उत्कृष्ट मार्गदर्शन भी देती रहीं। परमपूज्य गुरुदेव की तरह संपर्क में आने वाले हर किसी के लिए उसके उज्ज्वल भविष्य के लिए श्रेष्ठ चिंतन दिया। प्रस्तुत है उनके श्रेष्ठ चिंतन के कुछ दिव्य कण।

● समाज-सुधार के प्रयत्न दूसरे लोग पत्ते सींचकर कर रहे हैं। अमुक बुराई छोड़ो, अमुक कुरीति त्यागो, अमुक आदत छोड़ो, अमुक काम करो, अमुक काम मत करो की पुकार चारों ओर से उठ रही है। एक बुराई कम नहीं हो पाती, तब तक दूसरी उपज पड़ती है। आदमी से चोरी छुड़ाई जाए तो जब तक चोरी छूट पाती है कि जुआ खेलना आरंभ कर देता है। अंत:करण गंदा हो, आत्मा मलिन हो भीतर मैल भरा हो तो एक बुराई छोड़ने पर भी वह दूसरी बुराइयों से नहीं बच पाता। इसलिए ऋषियों ने अलग-अलग समस्याओं के अलग-अलग उपाय न बताकर, सब समस्याओं का एक ही हल सुझाया था—आस्तिकता, धार्मिकता। इस तत्त्व को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है—धार्मिकता, नैतिकता, मानवता, कर्त्तव्यपरायणता, सामाजिकता आदि-आदि।

● दु:ख और क्लेशों की आग में जलने से बचने की जिन्हें इच्छा है, उन्हें पहला काम यह करना चाहिए कि अपनी आकांक्षाओं को सीमित रखें। अपनी वर्तमान परिस्थिति में प्रसन्न और संतुष्ट रहने की आदत डालें। गीता के अनासक्त कर्मयोग का तात्पर्य यही है कि महत्त्वाकांक्षाएँ वस्तुओं की न करके केवल कर्त्तव्यपालन की करें। यदि कोई व्यक्ति सर्वांगीण आत्मोन्नति के प्रयत्न कर कर्त्तव्यपालन करने की आकांक्षा करे तो उसे सफलता मिलते समय मिलने वाले आनंद की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए, वरन जिस क्षण से कर्त्तव्यपालन आरंभ करता है, उसी समय से आकांक्षा की पूर्ति आरंभ हो जाती है और साथ ही सफलता का आनंद भी मिलता है।

● बुद्धिमत्ता, चतुरता, तत्परता, मधुरता, परिश्रमशीलता के सहारे मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है। जिसमें यह गुण न हों उसका सुख-साधन उपार्जित करने के लिए बहुत सफल हो सकना कठिन है। मूर्ख, मंदबुद्धि, फूहड़, आलसी, प्रमादी एवं कर्कश स्वभाव के लोगों की महत्त्वाकांक्षाएँ आमतौर से असफल ही रहती हैं। इन दुर्गुणों से बचकर उन्नतिशील स्वभाव बनाना मनुष्य के अपने हाथ में है। वह चाहे तो अभ्यास और विचार-शक्ति का, आत्मनिर्माण का सहारा लेकर अपने आप को सुधार सकता है और उन्नतिशील बनने का बहुत कुछ मार्ग साफ कर सकता है। अनेकों प्रगतिशील लोगों ने इसी मार्ग का अवलंबन किया है। उनने अपने स्वभाव की दुर्बलताओं को एक-एक करके परखा है और बीन-बीनकर निकाला है।

● आत्मनिरीक्षण कर सकना और अपनी कमजोरियों को आप समझ लेना एवं उनसे लड़ने को तत्पर हो जाना हर किसी का काम नहीं है। मनस्वी और साहसी लोग ही यह सब कर सकते हैं। शेष लोग तो अपनी दुर्बलताओं को समझ ही नहीं पाते, कोई समझाए तो उसे

दोषी और शत्रु मानकर उसे बुरा मानते हैं और लड़ने को तैयार होते हैं। अपनी कमजोरियों के कारण मिली असफलता को वे दूसरों के सर थोपकर स्वयं निर्दोष बनना चाहते हैं। आमतौर से लोग इसी रास्ते को अपनाते हैं। पर इस आत्मवंचना से परिस्थिति बदलती नहीं। अपने दुर्गुण ही अपनी उन्नति में सबसे बड़े बाधक होते हैं। उन्हें हटाने का प्रयत्न नहीं होता। फलस्वरूप उन्नति का द्वार भी नहीं खुलता, लोग रोते-झींकते भाग्य, ईश्वर, ग्रहदशा, कलियुग आदि की चर्चा करते रहते हैं और अपना दोष दूसरों के मत्थे मढ़कर किसी प्रकार आत्मसंतोष कर लेते हैं।

● संतोष-लाभ उसी को मिलता है, जो परिपूर्ण प्रयत्न करने पर भी जो मिलता है, उसी में प्रसन्न रहता है। बड़े-बड़े मनसूबे बाँधकर शेखचिल्ली की कहानी को अपने ऊपर लागू नहीं करता। हर बुरी-भली परिस्थिति के लिए तैयार रहता है। प्रयत्न यदि विफल हो जावे तो भी खिन्न नहीं होता, वरन असफलता के अनुभव को ध्यान में रखकर अगली बार और भी अधिक उत्साह एवं तत्परता के साथ काम करता है। संतोष का वास्तविक अर्थ है—धैर्य। पुरुषार्थ का फल मिलने में देर लगती है। कभी-कभी तो यह देर बहुत लंबी भी हो सकती है। ऐसी दशा में अधीरता एवं व्याकुलताजन्य खिन्नता से मन को बचाए रहना ही संतोष का प्रधान कार्य है। असफलता को संसार की एक आँखमिचौली मानते हुए अपने उत्साह और प्रयत्न में शिथिलता न आने देना ही संतोषी का प्रधान उद्देश्य है।

● संसार में कोई व्यक्ति ऐसा नहीं, जिसे सब सुख हों। किसी बात का अभाव न हो, सारी परिस्थितियाँ मनोनुकूल ही हों, कोई कष्ट न हो, कभी असफलता न मिले, कोई जिसका विरोधी न हो; ऐसा मनुष्य इस पृथ्वी पर खोजे न मिलेगा। जहाँ अनेक सुख-साधन मनुष्य को भगवान ने दिए हैं, वहाँ कुछ थोड़े अभाव रखे हैं। विवेकशील व्यक्ति जीवन में उपलब्ध सुख-सुविधाओं का अधिक चिंतन करते हैं और उन उपलब्धियों पर संतोष प्रकट करते हुए प्रसन्न रहते हैं और उस कृपा के लिए ईश्वर को धन्यवाद देते रहते हैं। थोड़े-से अभाव एवं कष्ट उन्हें वैसे ही कुतूहलवर्द्धक लगते हैं; जैसे माता अपने सुंदर बालक के माथे पर काजल का टीका लगाकर 'डिठोना' बना देती है कि कहीं इसे नजर न लग जाए।

● इस संसार का निर्माण सत् और असत्, शुभ और अशुभ, भले और बुरे तत्त्वों से मिलकर हुआ है। कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं, जो पूर्णतः बुरा या पूर्णतः भला हो। समय-समय पर यह भली-बुरी परिस्थितियाँ दबती और उभरती रहती हैं। धूप-छाँह की तरह प्रिय और अप्रिय अवसर आते-जाते रहते हैं। इनमें से किसे स्मरण रखा जाए और किसे भुलाया जाए; यही विचार करना बुद्धिमत्ता का चिह्न है। यदि हम दुःखों को, अभावों को, असफलताओं को, दूसरों के अपकारों को ही स्मरण किया करें तो यह जीवन नरकमय दुःखों से भर जाएगा। पर यदि दृष्टिकोण बदल लिया जाए और प्रिय प्रसंगों, सफलताओं, प्राप्त साधन-संपदा के लोगों और दूसरों के लिए हुए उपकारों को स्मरण किया जाए तो प्रतीत होगा कि भले ही थोड़े अभाव आज हों, पर उनकी तुलना में सुखदायक वातावरण ही अधिक है।

● सुखी जीवन की आकांक्षा सभी को होती है। वह उचित और स्वाभाविक भी है। पर उसकी उपलब्धि तभी संभव है, जब हम अपने दृष्टिकोण की त्रुटियों को समझें और उन्हें सुधारने के प्रयत्न करें। सुधरा हुआ दृष्टिकोण

स्वल्प-साधनों और कठिन परिस्थितियों में भी शांति और संतोष को कायम रख सकता है। गरीबी में भी लोग शांति और स्वर्ग का आनंद उपलब्ध करते देखे जाते हैं, पर यदि दृष्टिकोण अनुपयुक्त है तो संसार के समस्त सुख-साधन उपलब्ध होते हुए भी हमें सुखी न बना सकेंगे। अतएव सुखी जीवन की आकांक्षा करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उचित है कि अपने दृष्टिकोण को परिमार्जित बनाने के लिए निरंतर प्रयत्न करता रहे।

● हम जैसी परिस्थितियाँ प्राप्त करना चाहते हैं, उसी के अनुसार अपनी मनोभूमि को ढालें। आत्मनियंत्रण और आत्मनिर्माण के आधार पर हम अपने लिए अपनी भली-बुरी दुनिया का निर्माण आप कर सकते हैं, अपने भाग्य के निर्माता स्वयं बन सकते हैं।

● दूसरों को सुधारने से पूर्व हमें अपने को सुधारना पड़ेगा और यह समझना पड़ेगा कि लाठी के बल पर किसी को कुछ देर के लिए चुप या विवश किया जा सकता है, पर उसे बदला या सुधारा नहीं जा सकता। जब तक विवशता रहेगी, तब तक वह चुप रहेगा, पर अवसर मिलते ही वह दूने वेग से उलटा आचरण करके अपने अपमान का बदला चुकाएगा। यह संसार कुएँ की आवाज की तरह है; जैसा हम बोलते हैं, वैसी ही प्रतिध्वनि लौटकर आती है। इसलिए यदि हमें अपने प्रति दूसरों का व्यवहार सज्जनता का देखने की इच्छा हो तो पहले अपने को इस योग्य सिद्ध करना होगा कि हम उसके वस्तुतः अधिकारी हैं। ❑

गर्भोत्सव प्रशिक्षक-प्रशिक्षण शिविर

आओ गढ़ें संस्कारवान पीढ़ी

गायत्री तपोभूमि, मथुरा में दिनांक 02-03 अक्टूबर, 2025 को गर्भोत्सव प्रशिक्षक-प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है। गर्भावस्था के दौरान ही गर्भस्थ शिशु को श्रेष्ठ व्यक्तित्व के रूप में गढ़ देना, युग निर्माण योजना का एक महत्त्वपूर्ण चरण है। कार्यकर्त्ता भाई-बहनों से निवेदन है कि इस शिविर में भागीदारी करके प्रशिक्षण प्राप्त करें कि वैज्ञानिक और आध्यात्मिक तथ्यों के साथ गर्भवती माताओं का किस प्रकार से मार्गदर्शन किया जाए, ताकि वे अपने गर्भ में पल रही संतान को पूर्ण स्वस्थ और संस्कारवान बना सकें। परिजन भाई-बहन स्वीकृति प्राप्त कर एक दिन पूर्व आएँ।

समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र

पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281003

फोन : (0565) 2530115, 2530128, 2530399, मो.-09927086287, 09927086289

E-Mail ID : yugnirman@yugnirmanyojna.org

समय प्रबंधन से तनाव-निवारण

अँगरेजी में कहावत है—"टाइम इज मनी" समय ही धन है। जो समय की कमी कहते हैं, उनके अंदर टाइम मैनेजमैंट का अभाव है। हम इच्छाशक्ति से टाइम को बचा सकते हैं। तनाव से बच सकते हैं।

(अ) अपने पूरे दिन के कार्यों का विभाजन कीजिए—

- प्राथमिकता के आधार पर कार्यों को विभाजित कीजिए।
- महत्त्वपूर्ण कार्य को पहले कर डालिए।
- कार्यों की पूर्व योजना बनाइए।
- अर्जेंट और महत्त्वपूर्ण में अंतर पहचानिए।

(ब) हर काम सुव्यवस्थित ढंग से कीजिए—

- आस-पास का वातावरण शांत, सहज और सकारात्मक रखिए।
- क्रोध और जल्दबाजी से बचिए।
- काम करने का तरीका सही रखिए।

(स) ध्यान केंद्रित कीजिए—

- एक बार में एक ही काम कीजिए।
- काम करने में पूरा मन लगाइए।
- काम करते समय एकाग्रता बनाए रखिए।
- मोबाइल पर लंबी बात मत कीजिए। मोबाइल भी तनाव देता है।
- ध्यान, योग, प्राणायाम से अपनी कार्यक्षमता बढ़ाइए।

(द) सुव्यवस्थित रहिए—

- अस्त-व्यस्त मत रहिए।
- हर शनिवार अपने फालतू कागज हटाएँ। अपने पर्स में निरर्थक पुरानी परची इत्यादि को हटाएँ।
- सभी चीजों को सुव्यवस्थित यथास्थान, रखिए, जिससे ढूँढ़ने में व्यर्थ का समय बरबाद न हो।

(ई) समय के पाबंद बनिए—

- अपने अपाइंटमेंट के प्रति ईमानदार रहिए।
- समय पर सभी काम कीजिए।
- दिए गए समय पर पहुँचिए।
- कामों को मत टालिए।
- भूलने से बचने के लिए डायरी में लिखिए।
- किसी भी महत्त्वपूर्ण काम को तुरंत नोट कीजिए।
- एक बार बीता समय वापस नहीं आता अतः भरपूर जियो।
- व्यस्त रहो-मस्त रहो।
- खूब हँसना-हँसाना आपको खुश रखने तथा तनाव-निवारण में मददगार होगा।
- दिनचर्या बनाकर उस पर अमल कीजिए।
- दो बड़े कामों के बीच का समय छोटे कामों को निपटाने में लगाएँ।
- प्राकृतिक दृश्यों का आनंद लें। झरना, तालाब, नदी, पर्वत, पेड़, फूल, बादल, आकाश, पक्षी आदि को निहारें।

(उ) पर्याप्त मात्रा में नींद लें—

- स्वस्थ मन और स्वस्थ तन के लिए पर्याप्त गहरी नींद लेना आवश्यक है।
- नींद पूरी न होने पर कोई काम सही नहीं होता।
- शारीरिक, मानसिक श्रम के बाद विश्राम या नींद जरूरी है।
- योगनिद्रा आदि ध्यानात्मक प्रक्रिया से थकान मिटाएँ।
- प्रकृति से नाता जोड़ें, तनाव दूर होगा। प्राकृतिक गहरी नींद सुखद होगी। ❒

प्राकृतिक औषधि : करेला

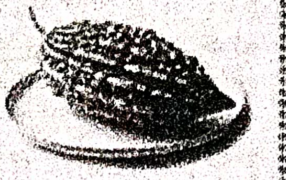

प्रकृति ने विभिन्न स्वाद एवं भिन्न-भिन्न रंग के गुण के फल एवं सब्जियाँ प्रदान की हैं, जिनमें करेला कड़आ होने पर भी सब्जी के रूप में उपयोगी हैं। करेला भारतवर्ष में सर्वत्र होता है। एंटिआक्सीडेंट होने के कारण तथा प्राकृतिक रूप से करेले में अनेक फाइटोकेमिकल होने से हमारे शारीरिक स्वास्थ्य के लिए बड़ा गुणकारी है। यह पारे के विषैले दुष्प्रभाव को भी मिटाता है। इसमें पर्याप्त मात्रा में फास्फोरस होता है। यह कफदोष को मिटाता है। मधुमेह से बचाता है तथा रक्तशर्करा को नियंत्रित भी करता है। जीवनीशक्ति बढ़ाने एवं रक्तशोधन में करेला की बड़ी भूमिका है। विटामिन ए, सी तथा अनेक खनिजलवणों—लोहा, कैल्सियम, फास्फोरस आदि का भंडार है। यकृत (लिवर) को बल देता है।

मस्तिष्क, हृदय व अस्थियों को स्वस्थ रखता है। मंद जठराग्नि को जाग्रत करना, मोटापा से बचाना, सूजन दूर करना, दरद मिटाना इसके प्रमुख गुण हैं। मूत्रल स्वभाव होने से शारीरिक विषैले तत्त्वों (टॉक्सिन्स), जैव विष द्रव्यों को बाहर निकालने में उपयोगी है। नेत्रों की ज्योति बढ़ाता है। कृमिनाशक, घाव भरने वाला, कुष्ठनाशक, प्रमेहनाशक, त्रिदोषनाशक है। रक्ताल्पता दूर करता है। ज्वर विनाशक है। पौष्टिक, कामोद्दीपक, स्तंभक होता है। मूत्र-विकार, पेट की वायु-विकृति तथा पथरी को नष्ट करता है। आमवात एवं सुजाक को नष्ट करता है। करेले की सब्जी का सेवन करने से चेचक एवं खसरे से बचाव होता है।

विभिन्न प्रयोग

पथरी में—करेले के पत्तों का रस पथरी को नष्ट करता है। 40 ग्राम पत्तों के रस को 20 ग्राम दही के साथ पीना चाहिए, तत्पश्चात 100 ग्राम छाछ पीने का क्रम नित्य प्रातः लंबे समय तक बनाए रखें। प्रातः उषापान (जल सेवन) में नीबू का रस निचोड़कर पीने का क्रम भी जोड़ देने से लाभ जल्दी होने लगता है। दिनभर में कम-से-कम 3-4 लीटर पानी पीना ही चाहिए।

● **आंत्रकृमि में**—करेले के पत्तों का रस आधा कप प्रातःकाल निराहार पीना चाहिए। यह क्रम कुछ दिनों तक बनाए रखने से लाभ होता है। पथ्य के रूप में छाछ, दही, फलों का रस उपयोगी है।

● **यकृत के बढ़ने तथा जलोदर में**—करेले के पत्तों का रस 30 ग्राम लेकर उसमें थोड़ा शहद मिलाकर पिलाने से यकृत-वृद्धि तथा जलोदर में लाभ होता है।

● **संधिवात में**—(1) करेले को 200 ग्राम लेकर आग पर भूनकर, भुरता बनाकर, उसमें देशी खाँड़ (स्वादानुसार) मिलाकर गरमा-गरम सुहाता हुआ रोगी को खिलाना चाहिए। इस प्रकार 15 दिनों तक प्रयोग करने पर स्नायुगत (नर्वस सिस्टम के कारण उत्पन्न) संधिवात में लाभ होता है।

(2) गठिया एवं संधिवात के दरद पर—संधियों के दरद-स्थल पर करेले का रस निकालकर गरम लेप करने से दरद से निवृत्ति होती है।

● त्वचा संबंधी विकारों में—खाज, खुजली इत्यादि त्वचागत दोषों में प्राय: रक्त की अशुद्धि का कारण प्रमुख रूप से रहता है। रक्तशोधक गुण होने के कारण करेला इनमें लाभ पहुँचाता है। करेले को सुखाकर, चूर्ण बनाकर रख लें तथा 4 ग्राम चूर्ण शहद के साथ 40 दिनों तक प्रात: निराहार चटाने से लाभ होता है।

● मधुमेह में—(1) करेले में विद्यमान बायोएक्टिव तत्त्वों द्वारा शर्करा को नियंत्रित करने में बड़ी मदद मिलती है। इंसुलिन की निर्भरता वाले रोगी को 5 ग्राम करेले का चूर्ण पानी के साथ सेवन कराने से लाभ होता है।

(2) करेले के पत्तों का रस निकालकर 30 ग्राम रस नित्य पीने से लाभ होता है।

(3) करेले की सब्जी, मधुमेह रोगी के लिए लाभप्रद होती है।

(4) नित्य 2 करेले, 2 टमाटर, 1 खीरे का रस निकालकर पीने से शर्करा तो नियंत्रित रहती ही है, किडनी को स्वस्थ बनाए रखने में भी बड़ी मदद मिलती है।

● तिल्ली (प्लीहा) के बढ़ने पर—30 ग्राम करेले के रस में थोड़ी-सी राई और नमक मिलाकर नित्य पीने से लाभ होता है।

● अम्लपित्त में—थोड़े-से करेले के पत्ते एवं फूल लेकर घृत में भूनकर खाने से लाभ होता है।

● पशुओं के मुख रोग में—गाय, भैंस आदि के जीभ में काँटे निकल आते हैं; ऐसी परिस्थिति में करेले के पत्तों को पीसकर जीभ पर लेप करने से लाभ होता है।

● कान दरद में—करेले के पत्तों का रस या करेले के फलों का रस थोड़ा गरम कर लें तथा सुहाता हुआ 4 से 5 बूँद रस कान में रूई को भिगोकर टपका देने से लाभ होता है।

● ज्वर में—रविवार के दिन करेले की जड़ उखाड़कर लाएँ तथा स्वच्छ पानी से धोकर एक टुकड़ा धागे के सहारे कमर में बाँध देने से ज्वर दूर होता है। नीम के पत्ते, गिलोय घनवटी, महासुदर्शन चूर्ण या महासुदर्शन काढ़ा तथा अमृतारिष्ट इत्यादि कड़ुए स्वाद वाली इन औषधियों का प्रभाव सभी ज्वरों पर देखा गया है। कालमेघ, कुटकी, चिरायता, गिलोय चूर्ण को प्रमुख रूप से सभी प्रकार के ज्वरों में लाभप्रद पाया है। ज्वर दूर करने के लिए अपामार्ग की जड़ भी दाहिने हाथ की कलाई पर बाँध देने से लाभ होता है।

● फोड़ा-फुंसी होने पर—करेले की जड़ का उबटन 2-3 बार लगाने से लाभ होता है।

दान के पीछे दातापन की भावना नहीं होनी चाहिए। दान का अर्थ 'फेंकना' नहीं, वरन 'बोना' है। समाज के धरातल पर दान एक प्रकार की खेती है। दान से समाज का शरीर पुष्ट होना चाहिए, तभी वह दान है।

फोड़ा-फुंसी रक्त-विकार से संबंधित व्याधि है। अत: मिरच-मसालों का सेवन कम करें। तले हुए खाद्य पदार्थों से बचें। फल, हरी सब्जी तथा सलाद का अधिक सेवन करें।

● पारे के विष में—(1) पारे के विषैले दुष्प्रभाव को मिटाने के लिए करेले की 20 ग्राम जड़ पानी के साथ पीसकर कुछ दिन लगातार पिलाते रहने से पारे का विष शरीर से निकल जाता है।

(2) पारा शरीर में जाने पर बड़ा विषैला दुष्प्रभाव शारीरिक अंगों पर पड़ता है। उस दुष्प्रभाव को नष्ट करने के लिए नित्य करेले का रस 20 मि. ग्राम सुबह-शाम सेवन कराएँ।

● **बादी बवासीर में**—करेले की जड़ पीसकर मस्से पर कुछ दिनों तक नित्य लेप करने से लाभ होता है।

● **रक्तस्रावी बवासीर में**—10 ग्राम करेले के रस में 5 ग्राम देशी खाँड़ मिलाकर 30 दिनों तक पीने से रक्तस्रावी बवासीर में खून आना बंद हो जाता है।

● **मुँह के छालों में**—(1) करेले का रस निकालकर थोड़ी-सी चाक-मिट्टी मिलाकर जीभ पर लेप करने से छाले ठीक होते हैं। नीबू का रस पानी में मिलाकर निराहार पीना चाहिए। कब्ज न हो यह ध्यान रखें।

(2) करेले का रस 20 ग्राम लेकर थोड़ा शहद मिलाकर पिलाने से भी मुँह के छाले मिटते हैं।

● **हाथ-पैरों की सूजन में**—पत्ते या करेला-फल पानी के साथ पीसकर लेप लगाने से लाभ होता है। निर्गुंडी के पत्ते उपलब्ध हों तो पीसकर इस लेप के साथ मिला सकते हैं।

● **वमन में**—बच्चों को उलटी होने पर करेले के 2 बीजों की मिंगी निकालकर, 2 काली मिर्च पीसकर 1 गिलास पानी में मिलाकर छान लें तथा इसी पानी को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में 4-5 बार पिलाएँ।

● **खसरा में**—करेले के पत्तों का रस आधा कप लेकर चुटकीभर हलदी के साथ पिलाने से खसरा तथा अन्य विस्फोटक रोगों में लाभ होता है।

● **पाचनशक्ति कमजोर होने पर**—वर्षा-ऋतु में जठराग्नि मंद होने पर करेले की सब्जी खाने से जठराग्नि तेज होती है।

● **एग्जिमा की अचूक दवा**—500 ग्राम तिल का तेल और 450 ग्राम करेले के पत्तों का रस मिलाकर अच्छी तरह धीमी आग पर पका लें तथा ठंढा करके छानकर, काँच की शीशी में रख लें। इस करेला सिद्ध तेल को एग्जिमा पर नित्य लगाने से लाभ होता है। सफेद नमक का सेवन न करें। ☐

एक साधु ने गाँव के समीप रास्ते के किनारे झोंपड़ी बना रखी थी, जो उधर से निकलते उन्हें जल पिलाता। छाया में बिठाता और कुशल समाचार पूछता। बातों-बातों में यह चर्चा भी चलती कि आगे वाले गाँव के लोग कैसी प्रकृति के हैं। राहगीरों के इस प्रश्न के उत्तर में वह उलटा यह प्रश्न पूछता—''तुम्हारे गाँव के लोग कैसे हैं?'' जो राहगीर कहते कि हमारे यहाँ भले लोग हैं, उनको वह उत्तर देता—''सामने वाले गाँव के लोग बहुत भले हैं।'' जो कहते—''उनके यहाँ बुरे लोग रहते हैं।'' उनको वह कहता ''इस गाँव के लोग भी कम बुरे नहीं हैं।'' दो प्रकार की बातें करते सुनने वालों ने पूछा—''आप दो तरह की बातें क्यों कहते हैं?'' साधु ने कहा—''जो लोग अपने यहाँ बुराइयाँ पैदा करते हैं, वे यहाँ भी वैसा ही करेंगे और जैसे खुद हैं, वैसी ही प्रतिक्रिया यहाँ भी देखेंगे।'' सच ही कहा गया है कि बाग में घुसकर गुबरैला कीड़ा गोबर ढूँढ़ता है, पर मधुमक्खी पुष्प खोजती है। भले-बुरे का आग्रह रखकर देखने वाले को संसार वैसा ही भला-बुरा दिखाई देता है। 'जैसी दृष्टि-वैसी सृष्टि।'

सुधारकों की राह में काँटों की भरमार

जब सुधार-प्रयासों की शक्ति बढ़ती है और लगता है कि वे सफलता की दिशा में चल रहे हैं तो विरोध खड़ा किया जाता है। चुनौतियाँ मिलती हैं। शास्त्रार्थ खड़े किए जाते हैं। परचे-बाजी होती है एवं विरोधी यह प्रयत्न करते हैं कि उनकी जीत मानी जाए और प्रतिपादन-कर्त्ता को हारा हुआ या बदनाम सिद्ध कर दिया जाए।

अंतिम शस्त्र है—आक्रमण। जब कोई और उपाय नहीं सूझता तो मूढ़मति लोग आक्रमण का सहारा लेते हैं। शारीरिक चोट पहुँचाने से लेकर दुरभिसंधियाँ रचने तक आरोप-आक्षेप लगाकर चरित्र हनन तक की नीति अपनाते हैं। ऐसा प्राय: सभी सुधारवादियों को सहन करना पड़ता रहा है। जब तक आंदोलन शिक्षित सामान्य स्तर तक रहता है, तब तक उपहास, तिरस्कार का आश्रय लेकर ही प्रतिपक्षी काम चलाते रहते हैं, पर जब अवांछनीयता के अस्तित्व को अपने लिए खतरा खड़ा होते दीखता है, तो वह प्रतिशोध पर उतर आती है। निहित स्वार्थों के दाँव में लगा हुआ कानून का चक्कर जब हाथ से जाता दीखता है, तब वे अपने आक्रोश को एकत्रित करके हमला बोलने लगते हैं। देवासुर संग्राम का समूचा इतिहास इसी एक तथ्य के इर्द-गिर्द घूमता है। शहीदों के बलिदान के पीछे इसी उपक्रम की पुनरावृत्ति होती देखी जा सकती है।

संत सुधारक और शहीद की एक सुनिश्चित शृंखला है। महान परिवर्तन के प्रणेता को सर्वप्रथम संत की भूमिका निभानी पड़ती है, ताकि उसका चिंतन और चरित्र लोकश्रद्धा अर्जित करके अपने व्यक्तित्व और प्रभाव का दोहरा दबाव डालकर प्रस्तुत तर्कों, तथ्यों, प्रमाणों को सशक्त बना सके और अनेकानेक विचारशीलों को समर्थक, सहयोगी बना सके। इसके बाद सच्चे मन से अपनाया गया प्रतिपादन कार्यरूप में परिणत होने लगता है। लोग उसे करने भी लगते हैं, जो उनने समझा और सही माना था।

सुधारकों की यही सफलता है। इसके उपरांत जहाँ विचारशील उस प्रयास का अभिनंदन करते हैं, वहाँ निहित स्वार्थ आक्रमण का आश्रय लेते हैं और अपने प्रतिपक्षी मोर्चे को तहस-नहस करने का प्रयत्न करते हैं। संघर्ष चल पड़ने पर कभी एक पक्ष को चोट लगती है, कभी दूसरे को। असुरता हारती है तो प्रगति का पथ प्रशस्त होता है, पर यदि औचित्य पर भी आघात होने लगे, तो भी हानि नहीं। भावनाएँ उमड़ती हैं और छूटे हुए काम में लक्ष्य तक पहुँचने में सहायता करती हैं। ईसा, सुकरात, मंसूर, दयानंद आदि के प्राण ही ले लिए गए। इतने पर भी उनका छूटा प्रयास रुका नहीं, वरन और भी अधिक तेजी पकड़ता गया। इसी निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए तत्त्वदर्शियों ने कहा है कि अंतत: सत्य की ही विजय होती है। ❐

पितृ पक्ष पर विशेष

पितरों के निमित्त पुण्यकर्म का सुअवसर

जिस प्रकार देवियों की साधना के लिए सर्वाधिक अनुकूल समय नवरात्र होता है, उसी तरह पितृपक्ष के पंद्रह दिवस (श्राद्ध पक्ष) पितरों की तृप्ति, तुष्टि और शांति के लिए बेहद अनुकूल समय माना गया है। भारतीय संस्कृति में जीते जी पितरों की सेवा करने का विधान तो है ही, शरीर छोड़ने के बाद भी पूर्वजों के निमित्त श्रद्धापूर्वक दान एवं पुण्यकर्म करने की पावन परंपरा है। हमारे पूर्वज जिस भी रूप में हों उन तक अपनी भावनाएँ पहुँचाने, कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए कर्मकांड का भी सहारा लिया जाता है।

भगवान राम के पिता राजा दशरथ जी की अकाल मौत के कारण उन्हें मुक्ति नहीं मिली, तब उन्होंने गया में श्राद्ध-कर्म पिंडदान आदि किया था, जहाँ दशरथ जी की आत्मा ने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन तथा आशीर्वाद दिए थे।

पितृपक्ष में श्राद्ध के निमित्त जरूरतमंद को भोजन एवं वस्त्र दान भी किया जाता है। बीमारी, दुर्घटना आदि के कारण असमय मौत होने पर वह आत्मा धरती पर ही भटकती रहती है। उनकी मुक्ति के लिए ही श्राद्ध-तर्पण पिंडदान का विधान है। भागवत-कथा का अनुष्ठान भी इसी निमित्त किया जाता है। धुंधकारी का उद्धार भागवत-कथा श्रवण से हुआ था। प्रबल पितृदोष के कारण परिवार में वंश वृद्धि रुकना, कलह, रोग, कष्ट, शोक, दुर्घटना आदि अनेक कठिनाइयों को झेलना पड़ता है। अतः पितृदोषादि का जन्मकुंडली में ग्रहों के दुर्योग हों, तब तो अनिवार्यतः पितरों के निमित्त देवस्थान में, गोशाला में स्वयं जाकर गोसेवा, हरा चारा दान करना, गोग्रास आदि की सेवा पितृपक्ष में करनी चाहिए। गायत्री परिजनों द्वारा गायत्री संस्थानों में जनोपयोगी प्याऊ, कूलर एवं पंखों, बिछायत (दरी) का दान भी पितरों के निमित्त किया जाता रहा है। मंदिर निर्माण के लिए भी दान पितरों के निमित्त देते हैं।

पितरों की सेवा के निमित्त सत्साहित्य क्रय कर वितरण कराना, सद्वाक्य (स्टीकर्स) प्रचारित करना, गुरुस्थान, देवस्थान, तीर्थों में प्याऊ लगवाना, ठंढे पानी की व्यवस्था जन-कल्याणार्थ करना, स्कूलों में जाकर गरीब बच्चों को पाठ्य-सामग्री वितरण, अनाथालयों, अस्पतालों में जरूरतमंदों की सेवा भी पितरों को प्रसन्न करने के लिए करना चाहिए। बेल, गूलर, पीपल, बरगद (वट), नीम आदि का रोपण कर उनके रक्षण, पोषण और संवर्द्धन के लिए उचित व्यवस्था करना भी पितरों के लिए की गई सेवा मानी जाती है। तालाब, बावड़ी, कुओं का निर्माण भी पितरों को शांति देता है।

गायत्री परिवार द्वारा शांतिकुंज हरिद्वार, गायत्री तपोभूमि मथुरा तथा देशभर के प्रज्ञा संस्थानों में व्यापक तौर पर श्राद्ध-तर्पणादि कर्मकांड की सुव्यवस्था की जाती है।

गायत्री मंत्र-जप से पितरों को शांति-सद्गति मिलती है। पृथक रूप से पितृ-गायत्री मंत्र का एक माला जप भी नित्य पितृपक्ष में किया जा सकता है। यथा—'' **ॐ पितृगणाय**

विद्महे, जगद्धारिणी धीमहि, तन्नो पितृ प्रचोदयात्।''

पीपल के वृक्ष की जड़ में प्रतिदिन ताँबे के पात्र में साधारण जल में थोड़ा गंगाजल, गोदुग्ध, तिल, जौ, कुश आदि मिलाकर पितरों के निमित्त जल अर्पित करना सात प्रदक्षिणा करना चाहिए। पीपल देववृक्ष है। गोमाता में भी समस्त देवता तथा सभी तीर्थों का वास होता है। अत: गोशाला में गोग्रास, चारा दान करना भी पितरों को शांति देता है।

स्त्री-पुरुष सभी को पिंडदान, तर्पणादि कर्म का अधिकार है। अपने पूर्वजों के निमित्त परोपकार के सभी कार्य संकल्प लेकर करना चाहिए। केवल ब्राह्मण भोजन ही नहीं, श्रमिकों एवं भूखों को भोजन कराना भी पुण्य ही है।

अस्पतालों में जाकर दूध, दही, फल आदि रोगियों की सेवा हेतु देना भी पुण्यदायक है। परमपूज्य गुरुदेव ने भारतीय संस्कृति की उचित पावन परंपराओं को ही पोषण दिया है, उसी में एक श्राद्ध-तर्पण भी है। पितरों के बारे में मान्यता है कि पितृपक्ष में उन्हें स्वतंत्र कर दिया जाता है, जिससे वे अपने स्वजनों से संपर्क साध सकें। अत: उन सभी पितरों के लिए हरेक परिजन का कर्त्तव्य-धर्म बन जाता है कि हम पितृऋण को न भूलें। पितरों की संपत्ति का उपभोग करते हैं तो उनके निमित्त दान भी हमारा कर्त्तव्य है।

मान्यता यह भी है कि पितरों के बिना ईश्वरीय कृपा भी हम तक नहीं पहुँच पाती है। जब पितर खुश होते हैं तो दैवी कृपा की रुकावट स्वत: दूर हो जाती है।

जगन्नाथ पुरी, गंगासागर, बदरीनाथ, नर्मदा-उद्गम अमरकंटक, गया, कुरुक्षेत्र, उज्जैन, पुष्कर-नासिक, चित्रकूट, हरिद्वार, मथुरा, काशी, प्रयागराज, आदि तीर्थों का श्राद्ध-तर्पण हेतु विशेष महत्त्व है। इसी तरह नदियों में नर्मदा, गंगा, सूर्य-पुत्री ताप्ती, क्षिप्रा, यमुना, गोदावरी, फल्गू आदि का विशेष महत्त्व है।

स्कंदपुराण के अनुसार नर्मदा नदी पर श्राद्ध-तर्पण का महत्त्व 16 गुना अधिक है। अन्य स्थानों में राजस्थान के लोहागढ़ का भी अत्यंत महत्त्व क्षेत्रीय स्तर पर है। प्राय: सभी स्थानीय नदी-सरोवरों को भी तीर्थ जैसा मानकर स्थानीय स्तर पर श्राद्ध-तर्पण कराया जाता है। यह श्रद्धा प्रधान विषय है।

श्राद्ध-तर्पण भी संस्कार ही है। इसे भारतीय अध्यात्म और वैज्ञानिक मूल्यों के आधार पर अपनाया जाए।

राजा भगीरथ ने लंबे समय की कठोर तपश्चर्या, अपने 60 हजार पूर्वजों की मुक्ति के लिए सुरसरि गंगा जी को धरती पर अवतरित होने के लिए की। हम सब भी अपनी सात पीढ़ियों के उद्धार के लिए कुछ-न-कुछ तो अवश्य करें। यह हमारे पितृऋण को चुकाने का समय है।

वस्तुत: जितने स्थूलजगत् के प्राणी हैं, उससे कहीं अधिक सूक्ष्मजगत् में वायुतत्त्व के रूप में भटकती, अतृप्त आत्माएँ भी इसी संसार में व्याप्त हैं, जो किसी का उपकार या अपकार करती हैं उन सबकी मुक्ति के लिए पितृपक्ष का सुअवसर आता है। हम सब साधनात्मक सेवापरक, रचनात्मक कर्मकांड प्रधान एवं यज्ञीय कर्म से उनके कल्याण की तृप्ति, तुष्टि और शांति एवं मुक्ति के लिए पुरुषार्थ करें।

पितृपक्ष में संकल्प लेकर समर्थ परिजन सृजनात्मक पुण्यकार्य कर सकते हैं।

परमपूज्य गुरुदेव सदैव ही देश-काल परिस्थिति के आधार पर विवेकसम्मत कार्य के पक्ष में रहे हैं।

(1) कम-से-कम 11 देववृक्षों का आरोपण एवं 3 वर्षों तक उनका संरक्षण, पोषण, अभिवर्द्धन की जिम्मेदारी तथा अखण्ड ज्योति, युग निर्माण योजना मासिक पत्रिकाओं के 5-5 आजीवन सदस्य (20 वर्षीय) सदस्य बनाना।

(2) कम-से-कम पाँच असहायों की सहायता यथासामर्थ्य करना। एक तालाब या कुएँ का सार्वजनिक हितार्थ निर्माण कराना।

(3) कम-से-कम 21 जरूरतमंदों को भोजन कराना। पक्षियों को अनाज खिलाना।

(4) एक ठंढे जल का प्याऊ देवस्थान में लगवाना या मटकों का दान करना।

(5) गोसेवा के निमित्त एक वर्ष के लिए गोशाला में चारा दान करना।

(6) कम-से-कम पाँच वृद्धों को वस्त्र, चरणपादुका का दान। □

आश्विन नवरात्र के सुअवसर पर घर-घर गायत्री का लघु अनुष्ठान संपन्न हो

नवरात्र के दिनों संपूर्ण विश्व में साधना का वातावरण स्वतः ही बना रहता है। इस बार सितंबर माह की 22 तारीख से नवरात्र प्रारंभ हो रहे हैं। इस पावन वेला में साधना करने से कई गुना प्रतिफल मिलता है। युग निर्माण योजना, अखण्ड ज्योति तथा प्रज्ञा अभियान पाक्षिक के सभी सदस्य एवं पाठक बंधु यथासंभव प्रतिदिन 30 माला गायत्री मंत्र जप या 300 बार गायत्री मंत्र-लेखन की सरल, सहज साधना का क्रम बनाएँ। नौ दिनों तक फलाहार, दुग्धाहार या अस्वाद—बिना नमक, बिना चीनी के भोजन का व्रत अपनाकर भूमि या तख्त पर शयन, ब्रह्मचर्य-पालन, यथासंभव मौन तथा अपनी सेवा स्वयं करना, आदि इन तपस्यापरक नियमों का पालन करते हुए अनुष्ठान करें अखण्ड दीप शताब्दी वर्ष की पुण्य वेला में साधनात्मक ऊर्जा आत्मसात् कर पूज्यवर के सपनों को साकार करने में अपने समय, श्रम, धन और भावनाओं को ईश्वीय प्रयोजन में नियोजित करें ऐसा अनुरोध है। नवमी के दिन अपनी पूर्णाहुति घर में यज्ञायोजन कर अथवा शक्तिपीठ आदि में सामूहिक यज्ञ में अपने सभी परिवारजनों की भागीदारी के साथ संपन्न करें।

व्यवस्थापक
गायत्री तपोभूमि, मथुरा

पढ़ना भी एक कला

पढ़ना एक कला है। यह कला बताती है कि हम कैसे पढ़ें कि विषय की सही समझ पैदा हो सके और इसे हम ठीक-ठीक ढंग से अभिव्यक्त एवं प्रतिपादित कर सकें। विद्यार्थी पढ़ता है तो उसे विषय की समझ होनी चाहिए एवं शिक्षक पढ़ाता है तो उसे बेहतर ढंग से अभिव्यक्त करना आना चाहिए, परंतु पढ़ना तो दोनों को ही पड़ता है। एक को अपनी परीक्षा के लिए पढ़ना पड़ता है, तो दूसरे को इसे समझाने के लिए। यह भी आवश्यक है कि पढ़ाई में रुचि पैदा हो, जिससे पढ़ने का कार्य सुचारु रूप से चलता रह सके। रुचि तब पैदा होती है, जब विषय का उद्देश्य एवं औचित्य का ज्ञान हो।

रुचिपूर्वक पढ़ना तभी संभव हो पाता है, जब हमें उस विषय के उद्देश्य का पता हो कि आखिर हम उसे पढ़ क्यों रहे हैं और उस विषय का हमारे जीवन से क्या संबंध है ? जब तक यह बात स्पष्ट नहीं हो पाती है कि विषय का औचित्य क्या है और उसकी हमारे निजी जीवन में क्या उपयोगिता एवं आवश्यकता है, तब तक विषय गधे की पीठ पर चंदन की लकड़ी को ढोने के समान भारवत् प्रतीत होता है। गधा चंदन को ढोता तो रहता है, परंतु वह उसके महत्त्व एवं सुगंध से वंचित बना रहता है। ठीक इसी प्रकार हम भी विषय को ढोते रहते हैं, पर हमें यह भी पता नहीं रहता है कि जिस कक्षा में हम पढ़ते हैं, उसका पाठ्यक्रम क्या है और क्यों है ? सब कुछ एक बोझ-सा, रुचिहीन मालूम पड़ता है, परंतु ठीक इसके विपरीत जब हमें विषय का लाभ एवं उपयोगिता की जानकारी हो जाती है तो रुचि स्वत: पैदा हो जाती है और हमारा मन पढ़ने में रमने लगता है।

पढ़ने के लिए हमें अपनी क्षमताओं का अनुभव होना चाहिए। ये क्षमताएँ हैं—(1) आंतरिक क्षमता, (2) सीखने की क्षमता, (3) अभिव्यक्ति की क्षमता, (4) स्मरणशक्ति। आंतरिक क्षमता के अंतर्गत हमारी समझ कितनी है, यह आता है। इसमें यह देखने की बात है कि क्या हमारी क्षमता इतनी है कि हम विषय का निर्वाह कर सकें या उसे समझ सकें। यदि हमारी क्षमता यह नहीं है कि हम गणित को समझ सकें और इसके बावजूद गणित की पढ़ाई करें तो यह विषय हमें कभी समझ में नहीं आएगा; क्योंकि इसके लिए हमें जितनी मानसिक ऊर्जा को इसमें लगाना पड़ेगा, उतनी हम नहीं लगा सकते। यदि हम इसमें अपनी मानसिक ऊर्जा नहीं लगाएँगे तो यह हमारे सिर के ऊपर से निकल जाएगा। हम गणित की किताब लेकर बैठे रहेंगे, पर पल्ले कुछ नहीं पड़ेगा। शिक्षक पढ़ाकर चला जाएगा, पर हम अपनी ही उधेड़बुन में फँसे रह जाएँगे और कुछ भी समझ नहीं आएगा।

विषय की समझ पैदा करने के लिए आवश्यक है कि हमारी मन:स्थिति उस विषय के साथ संबंधित हो जाए और जैसे ही यह संबंध-सूत्र जुड़ने लगता है तो विषय की समझ पैदा होने लगती है। फिर हम विषय की गहराई के साथ-साथ उसके विस्तार एवं व्यापकता को जानने लगते हैं और इसके

साथ ही हम एक विषय को अन्य विषयों के साथ जोड़कर देख सकते हैं एवं वह अपने जीवन में कितना उपयोगी एवं आवश्यक है, यह भी समझ सकते हैं। जब यह समझ पैदा हो जाएगी तो हमारे सीखने की क्षमता भी विकसित हो जाएगी। इसके बाद हम उस विषय को और अधिक गहराई से सीखने का प्रयास करेंगे।

सीखने की क्षमता विकसित हो जाने पर हम अपरिचित विषय के साथ ही गहरा तारतम्य जोड़ सकते हैं। यह कला आ जाने से हम अनेक नए विषयों को एक साथ संबंधित करके समझने लगते हैं एवं तुलना कर सकते हैं। इससे हमारा बौद्धिक विकास होता है। विषय की मूल वस्तु एवं मुख्य बिंदुओं का ज्ञान हो जाने से वह विषय समझने एवं सीखने में अत्यंत आसान हो जाता है। इस प्रकार हम उस विषय का बेहतर ढंग से निर्वाह कर सकते हैं। फिर उसे याद करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। याद तो तब करना पड़ता है, जब हमें विषय समझ में नहीं आता है। समझ आ जाए तो विषय स्वतः स्मृतिपटल पर अंकित हो जाता है। इसलिए उपनिषद् कहता है कि विषय की बेहतर समझ पैदा करो, उसे याद नहीं करो।

सामान्य रूप से विद्यार्थी अपने विषय को विभिन्न प्रकार से याद करता है और अपने दिमाग को उससे संबंधित आँकड़ों से ठूँसने-भरने लगता है। एक प्रश्न याद किया, फिर दूसरा, फिर तीसरा; इस प्रकार ढेरों प्रश्न दिमाग में भर दिए जाते हैं। दिमाग प्रश्नों का खजाना बन जाता है, पर परीक्षा के समय यदि किसी प्रश्न का उत्तर याद नहीं आया और इसके परिणामस्वरूप तनाव पैदा हो गया तो फिर स्थिति इतनी विपन्न एवं भीषण हो जाती है कि कहा नहीं जा सकता। ऐसे में हमारा दिमाग खिचड़ी बन जाता है और प्रश्नों का गलत उत्तर आने लगता है।

दिमाग की एक निश्चित खास बनावट एवं बुनावट होती है। किसी चीज को कैसे याद किया जाए, उसके लिए उसे उस बुनावट के संग तारतम्य रखना पड़ता है। इस तारतम्य में तब व्यतिक्रम आता है, जब भावनात्मक असंतुलन की स्थिति पैदा होती है। भावनात्मक स्थिरता में स्मरणशक्ति अपने चरम पर होती है, परंतु अस्थिर अवस्था में यह अत्यंत खतरनाक एवं हानिकारक होती है। ऐसी स्थिति में सोच, समझ, स्मृति एवं अभिव्यक्ति क्षमता तहस-नहस हो जाती है और भारी क्षति होती है एवं कुछ भी याद नहीं रहता, सब कुछ क्षत-विक्षत खंडहर में परिवर्तित हो जाता है। सारी मेहनत, ऊर्जा, समय का फिर कोई मूल्य ही नहीं रह जाता है। अतः हमें भावनात्मक संबंधों को स्थिर बनाए रखना चाहिए; ताकि हमारी ऊर्जा, श्रम एवं समय विषयवस्तु की समझ पैदा करने में नियुक्त हो सकें।

विषय की समझ हो और उसमें रुचि पैदा हो जाए तो उसकी अभिव्यक्ति हो सकती है। इस संदर्भ में विद्यार्थी विषय को बेहतर ढंग से प्रस्तुत कर सकता है और शिक्षक उसे प्रतिपादित कर सकता है, अभिव्यक्त कर सकता है। इस प्रकार पढ़ने में रुचि उत्पन्न होती है और हम ढेर सारे नए विषयों के प्रति आकर्षित होते हैं एवं उसे पढ़ने लगते हैं। पढ़ना एक कला है। उसका प्रारंभ हमें वहाँ से करना चाहिए, जहाँ उसका मूल विषय समाया रहता है, जिसके खोलने से सब कुछ खुलने लगता है। इस तरह हम सामान्य पढ़ाई को रुचिकर बनाते हुए स्वाध्याय के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं, जहाँ हमारे आंतरिक विकास की संभावनाएँ खुल जाती हैं। ❐

आत्मीय अनुरोध

समय को पहचानिए- भविष्य को सँवारिए

भगवान का अवतरण कुछ खास उद्देश्य की पूर्ति के लिए होता है। हमें बताया गया है कि वे धर्म की स्थापना और अधर्म के नाश के लिए आते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय-4, श्लोक 7-8 के अनुसार—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

भगवान कहते हैं—"हे भारत, जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने रूप को रचता हूँ अर्थात साकार रूप से लोगों के सम्मुख प्रकट होता हूँ।

साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए, पापकर्म करने वालों का विनाश करने के लिए और धर्म की अच्छी तरह से स्थापना करने के लिए मैं युग-युग में प्रकट हुआ करता हूँ।

श्रीरामचरितमानस बालकांड, नवाह्न, पारायण, पहला विश्राम तथा मास परायण, चौथा विश्राम के बाद दोहा 120 (घ) के बाद चौपाई 2 के आगे शिवजी माता पार्वती से कहते हैं—

"तस मैं सुमुखि सुनावउँ तोही।
समुझि परइ जस कारन मोही॥
जब-जब होइ धरम कै हानी।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी।
सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी॥
तब-तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥
असुर मारि थापहिं सुरन्ह,
राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस,
राम जन्म कर हेतु॥

—बा. का. दो.-121

त्रेता युग में भगवान राम के जन्म का कारण शिवजी इस प्रकार बताते हैं—

"जब-जब धर्म का ह्रास होता है और नीच अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं एवं वे ऐसा अन्याय करते हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता तथा ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी कष्ट पाते हैं, तब-तब वे कृपानिधान प्रभु भाँति-भाँति के दिव्य शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं। वे असुरों को मारकर देवताओं का मान बढ़ाते हैं। वे वेदों की मर्यादा की रक्षा करते हैं और जगत् में अपना निर्मल यश फैलाते हैं।"

वाङ्मय क्र. 68-पूज्यवर की अमृतवाणी' ग्रंथ में परमपूज्य का एक प्रवचन छपा है—'आज के प्रज्ञावतार की, युग देवता की अपील।' भगवान द्वारा इस धरा पर अवतार लेने के संबंध में वे कहते हैं—'मित्रो! भगवान जब भी आते हैं तो उसके कई मकसद होते हैं। एक तो आपने पहले ही सुन रखा है कि वह धर्म की स्थापना करने के लिए और अधर्म का नाश

करने के लिए आते हैं। यह दो मकसद तो आपको मालूम ही हैं, रामायण में भी आपने पढ़ा है। अब एक बात और जोड़ लीजिए हमारी ओर से। वह है—'जो सौभाग्यशाली समय को पहचान लेते हैं और उनके जीवनकाल में प्रकट अवतारी सत्ता या महापुरुष के अभियान से स्वयं को जोड़ लेते हैं; उनके साथ कदम-से-कदम मिलाकर चल पड़ने का साहस जुटा लेते हैं, उनके सौभाग्य को चमका देने के लिए, निष्ठावान भक्तों, अनुयायियों को सिर और माथे पर रखने के लिए भी भगवान आते हैं। उनको उछाल देने के लिए और इतिहास में अजर और अमर बना देने के लिए भी भगवान आते हैं। जो अवसर को पहचान लेते हैं, वे धन्य हो जाते हैं।'

पूज्यवर के संदेश को हृदयंगम करें

गुरुदेव ने जमाने को बदलने के लिए 'युग निर्माण योजना' की घोषणा मथुरा से सन् 1963 में की। इसकी सबसे छोटी इकाई 'व्यक्ति' को सुदृढ़ बनाने के लिए व्यक्ति-निर्माण पर जोर दिया। उनकी प्रथम पुस्तक का नाम था—'मैं क्या हूँ' जो बहुत ही प्रसिद्ध हुई। देश की आधी जनसंख्या नारी को आगे लाने के लिए परमवंदनीया माताजी ने पूज्य गुरुदेव के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर नारियों में साहस की संजीवनी का संचार किया। घीयामंडी में रहते हुए उन्होंने कई दु:खी नारियों को पास रखकर हिम्मत बढ़ाई। शांतिकुंज, हरिद्वार से देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे देश में भेजकर आधी जनसंख्या को आगे बढ़ाने का शुभारंभ किया। आज हमारी बहन-बेटियाँ धर्मतंत्र से लोकशिक्षण तो कर ही रही हैं; वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाकर अपना लोहा मनवा रही हैं। हमारे कार्यक्रमों में उनकी शानदार उपस्थिति तथा सक्रिय सहयोग से यह सिद्ध होता है।

कनिष्ठ वानप्रस्थ योजना

हमारी ऋषि-व्यवस्था के अनुसार—100 वर्ष के जीवन के लिए 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य आश्रम, 25-50 तक गृहस्थ आश्रम, 50-75 तक वानप्रस्थ तथा 75-100 संन्यास आश्रम की व्यवस्था बनाई गई थी।

वानप्रस्थ संस्कार भारतीय धर्म और संस्कृति का प्राण है। युवावस्था के कुसंस्कारों का शमन एवं प्रायश्चित इसी साधना द्वारा होता है। पूज्य गुरुदेव को वानप्रस्थ भाव से ओत-प्रोत कार्यकर्ताओं की सर्वाधिक संख्या में आवश्यकता पड़ी तो उन्होंने कनिष्ठ वानप्रस्थ योजना द्वारा युवाओं को आमंत्रित किया। यह योजना काफी कारगर सिद्ध हुई। इस योजना से जुड़े युवा आज गायत्री परिवार में कई महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ सँभाल रहे हैं।

आज परमपूज्य गुरुदेव एवं परमवंदनीया माताजी प्रत्यक्ष रूप से चाहे न दिखें, पर उनकी उपस्थिति का अनुभव हम करते हैं और गायत्री परिजन तथा बेटे-बेटियाँ समय को पहचानकर युग निर्माण के प्रवाह से जुड़कर महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाते हुए युग निर्माण मिशन के कार्यों में रुचि लेते हैं। आश्वस्त हुआ जा सकता है कि युवाओं का भविष्य उज्ज्वल है, राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल है। ❐

ज्ञातव्य

परिजन ध्यान दें

- ★ शिविरों में भाग लेने के लिए एक दिन पूर्व पधारें।
- ★ कृपया बिना स्वीकृति के न आएँ।
- ★ आवास की व्यवस्था ऊपर की मंजिलों में रहेगी।
- ★ अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड, मोबाइल नंबर, पद-व्यवसाय, आधार कार्ड नंबर, जन्म-तिथि आदि का पूरा विवरण दें।
- ★ किसी भी शिविर में अतिवृद्ध, बीमार, अनुशासन पालन करने में असमर्थ परिजन न आएँ।

आगामी नौ दिवसीय अनुष्ठान साधना सत्र

गायत्री तपोभूमि में चल रहे नौ दिवसीय अनुष्ठान साधना सत्र के आगामी शिविर निम्नलिखित हैं—

सितंबर, 2025	**अक्टूबर, 2025**	**नवंबर, 2025**	**दिसंबर, 2025**
22 से 30 (आश्विन नवरात्र)	5 से 13, 25 अक्टू.-2 नव.	22 से 30	01 से 09

वही परिजन आवेदन करें, जो प्रतिदिन 30 माला गायत्री मंत्र जप कर सकें।

मातृशक्ति सम्मेलन (दिनांक 8, 9, 10, 11 सितंबर, 2025)

पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी ने नारी शक्ति के उत्कर्ष हेतु अथक पुरुषार्थ किया है। उनके इस कार्य को आगे बढ़ाने हेतु गायत्री तपोभूमि के पावन परिसर में आगामी 8, 9, 10, 11 सितंबर, 2025 की तिथियों में चार दिवसीय **'मातृशक्ति सम्मेलन'** आयोजित किया जा रहा है, जिसमें नारी उत्थान के कार्यक्रमों पर व्यावहारिक मार्गदर्शन दिया जाएगा।

पत्रिका प्रचारक सम्मेलन

परमपूज्य गुरुदेव ने अपने क्रांतिकारी विचारों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए नित्य लेखन किया और पत्रिकाओं तथा 3200 पुस्तकों को सुलभ कराया। पत्रिकाओं का प्रसार उनकी विचारधारा के प्रसार के लिए आवश्यक है। पत्रिकाओं के प्रचार-प्रसार की समग्र योजना को समझने तथा सफल क्रियान्वयन हेतु ये शिविर निम्नलिखित तिथियों में आयोजित किए जा रहे हैं, जिसमें आप सभी परिजन अवश्य भागीदार बनें।

दि. 15 से 17	**सितंबर, 2025**	**असम, बंगाल, ओडिसा, महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, सिक्किम, भूटान, त्रिपुरा, मिजोरम, नेपाल आदि।**
दि. 07 से 09	**नवंबर, 2025**	**चंडीगढ़, दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, उत्तराखंड**

आगामी अन्य शिविर

युवा शिविर 12 से 14 नवंबर, 2025, कन्या कौशल शिविर 17 से 19 नवंबर, 2025

चालीस दिवसीय अनुष्ठान साधना शिविर 12 दिसंबर, 2025 से 20 जनवरी, 2026

आगामी पुस्तक मेला

दिनांक	स्थान	आयोजक
07 से 13 अक्टूबर, 2025	सेरेमनी लॉन, पूर्वी सब्जी मंडी गेट सहजनवाँ, गोरखपुर (उ. प्र.)	श्री राजेन्द्र पाण्डेय-9451078984

पारिवारिक सम्मेलन

[दि. 02-04 सितंबर, 2025]

परिवार निर्माण, युग निर्माण आंदोलन की मुख्य धुरी है, परिवार निर्माण के बिना मानव के उज्ज्वल भविष्य का निर्माण संभव नहीं। आदर्श परिवार व्यवस्था से ही श्रेष्ठ समाज बनता है। आदर्श परिवार व्यवस्था के सूत्रों को जानने, समझने तथा अपनाने की दिव्य प्रेरणाएँ पाने के लिए गायत्री तपोभूमि में 'पारिवारिक सम्मेलन' शिविर आयोजित किया जा रहा है।

प्राकृतिक चिकित्सा के शरीर-शोधन शिविर

यहाँ शरीर-शोधन शिविर रोग-प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाने के लिए तथा सामान्य शारीरिक एवं मानसिक कष्ट-कठिनाइयाँ दूर करने के लिए प्रतिमाह निरंतर आयोजित किए जा रहे हैं, इनसे सैकड़ों परिजनों को आशातीत लाभ हुआ है। आप भी इन शिविरों का लाभ उठा सकते हैं एवं अपने संपर्क क्षेत्र के परिजनों को इसके लिए प्रेरित कर सकते हैं। शरीर शोधन शिविर की आगामी तिथियाँ निम्नलिखित हैं—

सितंबर, 2025	अक्टूबर, 2025	नवंबर, 2025	दिसंबर, 2025
दि. 1 से 7	*दि. 1 से 7*	*दि. 1 से 7*	*दि. 1 से 7*
दि. 11 से 17	*दि. 11 से 17*	*दि. 11 से 17*	*दि. 11 से 17*
दि. 21 से 27	*दि. 24 से 30*	*दि. 21 से 27*	*दि. 21 से 27*

स्वास्थ्यार्थी को जो शुल्क जमा करना है निम्नानुसार है—

1. सामान्य कमरा—[दो व्यक्तियों का शुल्क-14,000/-]
2. प्राइवेट सामान्य कमरा—[एक व्यक्ति का शुल्क-10,000/-]
3. प्राइवेट वातानुकूलित कमरा—[एक व्यक्ति का शुल्क-14,000/-]
4. वातानुकूलित कमरा—[दो व्यक्तियों का शुल्क-20,000/-]

समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र

पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281003

फोन नं० : (0565) 2530115, 2530128, 2530399, मो.— 09927086287, 09927086289

Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org

Website : www.yugnirmanyojna.org

Youtube : youtube.com/@yugnirmanyojnaofficial

Facebook : Yug Nirman Yojna Mathura

शिक्षक दिवस पर विशेष

दिव्य प्रकाश के स्रोत

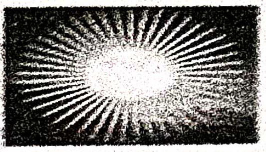

शिक्षक, आचार्य, गुरु एवं सद्गुरु समाज के दिव्य प्रकाश-स्रोत होते हैं। वे ज्ञान एवं चेतना की एक अवस्था विशेष के दिव्य प्रतीक-प्रतिनिधि हैं। कला सिखाने वाला **शिक्षक**; जिंदगी सिखाने वाला **आचार्य**; चेतना के गहन मर्म से परिचय कराने वाला **गुरु** एवं शिष्य को अपने में मिला लेने वाला तत्त्व **सद्गुरु** कहलाता है। ये चारों तत्त्व आपस में घुले-मिले तो हैं, पर एक नहीं हैं। हरेक की अपनी सीमा एवं सामर्थ्य होती है, परंतु अनगढ़ व्यक्तित्व को सुधार-सँभालकर भौतिक एवं आत्मिक रूप से परिपूर्ण करने में इनका अपना-अपना मौलिक योगदान रहता है।

शिक्षक ज्ञान की किसी कुशलता का विशेषज्ञ होता है। वह कुशलता के विशेष आयामों को खोलता एवं अनावृत्त करता है। उसको अपने विषय विशेष का विशेष एवं गंभीर ज्ञान होता है। शिक्षक को अपने विषय का गहरा अनुभव होता है और वह इस अनुभव का स्पर्श विद्यार्थी को भी करा देता है। शिक्षक में शिक्षार्थी के भीतर कुशलता को विकसित करने की अपार क्षमता होती है। उसमें शिक्षार्थी को अपने जैसा तथा अपने से भी बेहतर एवं निष्णात बना देने की कला होती है। साधारण से छात्र को अत्यंत प्रतिभावान शोधार्थी के रूप में गढ़ देने की विशेषज्ञता शिक्षक में होती है। शिक्षक ज्ञान का समुद्र होता है, जिसमें कला-कुशलताएँ उद्दाम लहरों की भाँति उफनती-उमड़ती रहती हैं। वह शिक्षार्थी के जीवन में इन कुशलताओं की बाढ़ ला देता है। वह उसे असाधारण प्रतिभा से निष्णात एवं पारंगत कर देता है। इस प्रकार शिक्षक ज्ञान का, कुशलता का बोध कराता है, परंतु जहाँ जिंदगी जीने की कला सिखाने की बारी आती है, शिक्षक असहाय और असमर्थ हो जाता है। इस बिंदु पर उसकी सारी सीमाएँ समाप्त हो जाती हैं, क्योंकि वह इस विषय से अनभिज्ञ एवं अपरिचित-सा होता है। सर्जन अपने ऑपरेशन थिएटर में सर्जरी का ज्ञान देता है, परंतु जिंदगी की सर्जरी की कला नहीं बता पाता। यह थोड़ा कठिन है, क्योंकि जिंदगी जीकर ही सीखी जा सकती है। स्वयं के व्यक्तित्व को परिष्कृत-परिमार्जित करके ही दूसरों के व्यक्तित्व को गढ़ा जा सकता है।

आज समाज, राष्ट्र और विश्व में प्रतिभाओं की कमी और अभाव नहीं है। मेडिकल, टेक्नीकल, प्रोफेशनल कॉलेजों से अव्वल दरजे में निकलने वाले प्रतिभावान छात्रों की कमी नहीं है और न ही पब्लिक कॉर्पोरेट सेक्टर एवं प्रोफेशनल कॉलेजों में एक्जीक्यूटिव आफिसर एवं प्रोफेसरों का अभाव है, परंतु ये विशेषज्ञ शिक्षक एवं प्रतिभाशाली छात्र दोनों ही जिंदगी जीने के मामले में दुर्बल एवं कमजोर हैं। इनका आंतरिक व्यक्तित्व बिखरा, धुँधला एवं खोखला-सा दिखाई देता है। ये किसी गहरी प्यास से प्यासे लगते हैं। इनकी भावना भटकी हुई, अतृप्त एवं अनबुझी होती है। इन्हें बौद्धिकता तो मिली, परंतु अनुभव नहीं मिला, प्रवीणता तो प्राप्त हुई, परंतु व्यक्तित्व नहीं सँवरा और न अनुभव कराने वाला, सँभालने वाला आचार्यरूपी शिक्षक मिला।

शिक्षक आचार्य नहीं होते। आचार्य शिक्षक का पर्याय भी नहीं है और हो भी नहीं सकता, परंतु आचार्य शिक्षक भी हो सकता है; क्योंकि वह व्यक्तित्व गढ़ने के साथ-साथ कला-कुशलता भी सिखा सकता है। आचार्य को व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों की गहरी समझ एवं बोध होता है और इसी कारण वह व्यक्तित्व को सँभाल-निखार सकता है। आचार्य की वाणीभर नहीं बोलती, उसका आचरण उससे भी अधिक मुखर होकर बोलता है। वाणी की पहुँच कानों तक ही सीमित होती है, परंतु आचरण प्राणों तक अपनी पहुँच बनाता है। आचार्य विचारों का संप्रेषण भर नहीं करता, साथ ही अनुभव प्रदान कर उनमें प्राणों को घोलता है। आचार्य मात्र विचार ही नहीं, गहन अनुभव के निष्कर्ष से प्राप्त आचरण भी प्रदान करता है।

आचार्य का ज्ञान बड़ा ही पारदर्शी होता है। वह व्यक्तित्व निर्माण की समग्र प्रविधियों का कुशल विशेषज्ञ होता है। वह बखूबी जानता है कि कैसे संस्कारों, आदतों, वृत्तियों आदि की दुर्बलताओं को हटाया-मिटाया जाए तथा इनके स्थान पर सदाचार, सद्विचार तथा सत्प्रवृत्ति की स्थापना की जाए। आचार्य व्यक्तित्व निर्माण की सूक्ष्म सर्जरी का सर्जन होता है। उसे इसके मर्म का गहरा बोध होता है। सैद्धांतिक के साथ-साथ उसे व्यावहारिक ज्ञान भी होता है।

चाणक्य आचार्य थे, चंद्रगुप्त को उन्होंने उसके व्यक्तित्व का बोध करा दिया था, उसके अनगढ़-अपरिष्कृत व्यक्तित्व को गढ़ दिया था। आचार्य चाणक्य राजनीति के शिक्षक थे और चंद्रगुप्त को राजनीति-ज्ञान से सराबोर कर दिया था। आचार्य जीवन के मर्म को जानता है। आई० सी० एस० की नौकरी को तिलांजलि देने वाले श्री अरविंद सही माने में आचार्य थे, जो अपने विद्यार्थियों में प्राण भरते थे, उनके व्यक्तित्व को गढ़ते थे। आचार्य का प्रभावकारी पक्ष उसके आचरण का आकर्षण होता है।

जलता हुआ दीपक ही बुझे-अनजले दीपक को जला सकता है। आचार्य जलते दीपक का ज्योतिर्मय एवं दिव्य प्रकाश होता है, जो अपनी इस रोशनी में न जाने कितने प्रकाश के इच्छुकों, जिज्ञासुओं एवं भटके हुओं को नूतन राह देता एवं पथ प्रदर्शित करता है। आचार्य की स्नेहिल छुअन में अंतर की प्यासी भावनाएँ तृप्त होती हैं और दिशाहीन, बेतरतीब विचार नई दिशा एवं आकार पाते हैं तथा अशिष्ट-असभ्य व्यवहार, शिष्ट-सौम्य सद्व्यवहार में परिवर्तित हो जाता है। आचार्य चरित्र, चिंतन एवं व्यवहाररूपी व्यक्तित्व को तो गढ़ता है, परंतु आंतरिक चेतना के विभिन्न आयामों को अनावृत्त कर पाने में असमर्थ होता है। वह मानवीय चेतना के मर्म को समझ पाने में अक्षम होता है। परंतु यह कार्य गुरु के लिए सहज-सुलभ होता है। गुरु मानवीय चेतना का गहरा मर्मज्ञ होता है। वह चेतना के रहस्य को उजागर उद्घाटित करता है।

चेतना का परिमार्जन, परिष्कार एवं विकास, व्यक्तित्व की ऊँचाई से ऊँचा होता है। मानवीय चेतना की शिखर यात्रा सामान्य घटना नहीं है। यह असामान्य और असाधारण बात है। पिंड में समायी ब्रह्मांडीय चेतना को अनुभव करने एवं कराने की क्षमता शिक्षक एवं आचार्यों के पास नहीं हो सकती। इस महाघटना को केवल गुरु ही संपादित एवं संचालित करता है। वह मानवीय चेतना की समग्रता को जानता एवं बताता है। वह न केवल अद्वितीय बातें बताता है, बल्कि

उनका प्रतिपल-प्रतिक्षण अनुभव भी करा देता है। ऐसी बातें जो न कभी कही गईं, न सुनी गईं, न जानी गईं और न समझी गईं; उनकी वह नए सिरे से व्याख्या-विवेचना करता है।

गुरु देहधारी ईश्वर होता है। गुरुरूप में भगवान मूर्त होते हैं। गुरु के पास बैठने से भगवत्चेतना का दिव्य स्पर्शबोध होता है। इसी कारण रामकृष्ण परमहंस ने गुरु के हृदय को 'भगवान का डाक-बँगला' कहकर उसकी गरिमा को महाभिव्यक्ति दी है।

सद्गुरु स्वराट नहीं, विराट होते हैं। सद्गुरु ब्राह्मी चेतना से सर्वथा अभिन्न होने के कारण इस जगत् के चरम-परम स्रोत होते हैं। यह जगत् भी उन्हीं का विस्तार, विराट रूप है। वे एक साथ महाबीज भी हैं और महावट भी। ऊपरी और बाहरी तौर पर हर कहीं, सब कहीं कितना भेद-विभेद और विभाजन क्यों न दिखाई दें, सद्गुरु की परम पावन चेतना से सभी कुछ अभिन्न और अभेद है। वह कहीं बाहर नहीं, अंदर में ही विद्यमान है। वह देहातीत है। अतः सद्गुरु को पाने की ढूँढ़-खोज अपने अंदर ही करनी चाहिए। सद्गुरु की महाचेतना शिष्यों के अंदर वास करती है। हम अपने अंदर झाँककर ही उसका दिव्य साक्षात्कार कर सकते हैं; अपनी ही चेतना की अंतर्यात्रा में हम सद्गुरु में तदाकार-एकाकार हो सकते हैं। इस प्रकार शिक्षक, आचार्य, गुरु एवं सद्गुरुरूपी कला, ज्ञान, चेतना और महाचेतना के मूर्तरूप का स्पर्श पाकर भौतिक एवं आत्मिक रूप से जीवन समृद्ध होता है। ❑

एक संगठित शक्ति की आवश्यकता हुई। गुरु गोविंद सिंह ने एतदर्थ एक घोषणा की—भाइयों! देश की स्वाधीनता पाने और अन्याय से मुक्ति के लिए चंडी बलिदान चाहती है, तुममें से जो अपना सिर दे सकता हो, वह आगे आए। गोविंद सिंह की माँग का सामना करने का किसी में साहस नहीं हो रहा था; तभी दयाराम नामक एक युवक आगे बढ़ा। गुरु उसे एक तरफ ले गए और तलवार चला दी रक्त की धार बह निकली, लोग भयभीत हो उठे। तभी गुरु गोविंद सिंह फिर सामने आए और फिर पुकार लगाई, अब कौन सिर कटाने आता है। एक-एक कर क्रमशः धर्मदास, मोहकम चंद, हिम्मत राय तथा साहब चंद आए और उनके शीश भी काट लिए गए। बस अब मैदान साफ था कोई आगे बढ़ने को तैयार न हुआ।

गुरु गोविंद सिंह अब उन पाँचों को बाहर निकाल लाए और विस्मित लोगों को बताया—यह तो निष्ठा और सामर्थ्य की परीक्षा थी, वस्तुतः सिर तो बकरों के काटे गए। तभी भीड़ में से—"हमारा भी बलिदान लो"—"हमारा भी बलिदान लो" की आवाज आने लगी। गुरु ने हँसकर कहा—"ये पाँच ही तुम पाँच हजार के बराबर हैं, जिनमें निष्ठा और संघर्ष की शक्ति न हो उन हजारों से निष्ठावान पाँच अच्छे? इतिहास जानता है इन्हीं पाँच प्यारों ने सिख संगठन को मजबूत बनाया।

योग से परिष्कृत मनोभूमि का निर्माण

अध्यात्म शास्त्रों में मन को ही बंधन और मोक्ष का कारण बताया गया है। मनोवेत्ता भी इस तथ्य से परिचित हैं कि मन में अभूतपूर्व गति, दिव्यशक्ति, तेजस्विता एवं नियंत्रण शक्ति है। इसकी सहायता से ही सब कार्य होते हैं, मन के बिना कोई कर्म नहीं हो सकता। भूत, भविष्य और वर्तमान सब मन में ही रहते हैं। ज्ञान, चिंतन, मनन, धैर्य आदि इसके कारण ही बन पड़ते हैं। परिष्कृत मन जहाँ अनेक दिव्यक्षमताओं का भांडागार है, वहीं विकृत मन:स्थिति रोग-शोक एवं आधि-व्याधि का कारण बनती है। आध्यात्मिक साधनाएँ, योग-तप आदि मन को साधने एवं परिष्कृत करने के विविध उपाय-उपचार हैं।

महर्षि पतंजलि ने योगदर्शन में चित्तवृत्तियों के निरोध को योग कहा है। अनियंत्रित, अस्त-व्यस्त और भ्रांतियों में भटकने वाली मन:स्थिति को मानवीय क्षमताओं के अपव्यय एवं भक्षण के लिए उत्तरदायी बताया है और इसे दिशाविशेष में नियोजित रखने का परामर्श भी दिया है। गीताकार ने भी मन को ही मनुष्य का मित्र एवं शत्रु ठहराया है और इसे भटकाव से उबारकर अपना भविष्य बनाने का परामर्श दिया है। इस संदर्भ में महर्षि वसिष्ठ का कहना है कि जिसने मन को जीत लिया, उसे त्रैलोक्य विजेता कहना चाहिए। इन प्रतिपादनों से एक ही संकेत मिलता है कि मनोदशा की गरिमा शारीरिक स्वस्थता से भी बढ़कर मानी जाए और समझा जाए कि अनेकानेक समस्याओं के उद्‌भव एवं समाधान का आधार इसी क्षेत्र की सुव्यवस्था पर निर्भर है।

इस संदर्भ में सुप्रसिद्ध मनोविज्ञानी हेक ड्यूक ने अपनी खोजपूर्ण पुस्तक—'माइंड एंड हेल्थ' में शरीर पर पड़ने वाले मानसिक प्रभाव का सुविस्तृत पर्यवेक्षण प्रस्तुत किया है। उनका निष्कर्ष है कि शरीर पर आहार के व्यतिक्रम का प्रभाव तो पड़ता ही है, अभाव व पोषक-तत्त्वों की कमी भी अपनी प्रतिक्रिया छोड़ती है। काया पर सर्वाधिक प्रभाव व्यक्ति की अपनी मन:स्थिति का पड़ता है। यह प्रभाव-प्रतिक्रिया नाड़ीमंडल पर 36 प्रतिशत, अंत:स्रावी हॉर्मोन ग्रंथियों पर 56 प्रतिशत एवं मांसपेशियों पर 8 प्रतिशत पाया गया है। अनुसंधानकर्त्ता चिकित्साविज्ञानियों ने अनेक रोगियों का पर्यवेक्षण करने के पश्चात निष्कर्ष निकाला है कि कोई ऐसा स्थूलकारण नहीं ढूँढ़ा जा सका, जिसके कारण उन्हें गंभीर रोगों का शिकार बनना पड़े, फिर भी वे अनिद्रा, अपच, उच्च रक्तचाप, हिस्टीरिया, कैंसर, कोलाइटिस, हृदयरोग जैसी घातक बीमारियों से ग्रस्त पाए गए। सबसे खास बात यह देखी गई कि किसी भी औषधि-उपचार से उन्हें कोई राहत नहीं मिली। देखा गया है कि जब मनोवैज्ञानिक तरीके से उनका चिंतन-प्रवाह मोड़ा गया तो सकारात्मक परिणाम सामने आए। बिना औषधि-उपचार से ही वे बहुत कुछ स्वस्थ हो गए।

आज की प्रचलित तमाम उपचार विधियों-पैथियों एवं नवीनतम औषधियों के बावजूद नानाप्रकार के रोगों की बाढ़-सी आई हुई है। श्री हेक के अनुसार ऐसी परिस्थितियों में रोग-निवारण का सबसे सस्ता, सुनिश्चित और हानिरहित निर्धारण करना होगा। इसके लिए

रोगोत्पत्ति के मूल कारण मन:स्थिति की गहन जाँच-पड़ताल करके तदनुरूप उपाय-उपचार अपनाने पर ही रुग्णता पर विजय पाई जा सकती है। अब समय आ गया है, जब 'होप' अर्थात आशा, 'फेथ' अर्थात श्रद्धा, 'कॉन्फीडेंस' अर्थात आत्मविश्वास, 'विल' अर्थात इच्छाशक्ति एवं 'सजेशन' अर्थात स्वसंकेत जैसे प्रयासों को स्वास्थ्य-संवर्द्धन के क्षेत्र में प्रयुक्त किया जाना चाहिए। मन की अतल गहराई में प्रवेश करके दूषित तत्त्वों की खोज-बीन कर, उन्हें निकाल बाहर करने में यही तत्त्व समर्थ हो सकते हैं। अन्य कोई नहीं।

शारीरिक आधियों और मानसिक व्याधियों से छुटकारा पाने एवं अवांछनीय आदतों के कारण उत्पन्न होती रहने वाली विषम परिस्थितियों से निपटने के लिए परिष्कृत मनोभूमि चाहिए। महामानवों में से प्रत्येक को अंतश्चेतना की उत्कृष्टता को किसी-न-किसी प्रकार अर्जित करना ही पड़ा है। बलिष्ठता के लिए व्यायाम, विद्वत्ता के लिए अध्ययन, उपार्जन के लिए पुरुषार्थ की जिस प्रकार आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार मनस्वी बनने के लिए योगाभ्यासपरक तप-साधना का विचार-परिष्कार का अभ्यास आवश्यक है।

काया के बाद आज के विज्ञजनों ने बुद्धि को अधिक महत्त्व दिया है। बुद्धि मनुष्य की प्रतिभा-प्रखरता को निखारने, योग्यता बढ़ाने के काम आती है। प्रत्येक क्षेत्र में इसी का बोलबाला या वर्चस्व है। अभी तक मानवीय व्यक्तित्व की इन दोनों स्थूल परतों—शरीर और बुद्धि को ही सर्वत्र महत्त्व मिलता रहा है। मन इन दोनों की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म है। प्रत्यक्ष रूप से उसकी भूमिका नहीं दीख पड़ने से अधिसंख्यक व्यक्ति उसे महत्त्व भी नहीं देते, जबकि बुद्धि एवं शरीर न केवल मन के इशारे पर चलते हैं, वरन उसकी भली-बुरी स्थिति से असामान्य रूप से प्रभावित भी होते हैं। इस तथ्य की पुष्टि अब अनुसंधानकर्त्ता मनोवेत्ताओं ने भी की है कि बीमारियों की जड़ शरीर में नहीं, मन में छिपी होती है। उसके विकास एवं परिष्कार से ही स्वस्थता एवं मनस्विता प्राप्त की जा सकती है।

पोषण अथवा आहार-विहार के संतुलन के अभाव में काया रुग्ण बन जाती है और अपनी सामर्थ्य गँवा बैठती है। इसी तरह वैचारिक खुराक न मिले, तो बुद्धि की प्रखरता मारी जाती है। अधिक-से-अधिक वे जीवन-शकट को किसी तरह खींचने जितना सहयोग ही दे पाते हैं। उपेक्षा की प्रताड़ना मन को सबसे अधिक मिली है। फलत: उसकी असीम संभावनाओं से भी मनुष्यजाति को वंचित रहना पड़ा है। निरुद्देश्य भटकती एवं मचलती हुई इच्छाओं-आकांक्षाओं का एक नगण्य स्वरूप ही मन की क्षमता के रूप में सामने आ सका है। मनोबल, संकल्पबल, इच्छाशक्ति की प्रचंड सामर्थ्य तो यत्किंचित् व्यक्तियों में ही दिखाई पड़ती है। अधिकांश व्यक्तियों से मन की प्रचंड क्षमता को न तो उभारते बनता है और न ही लाभ उठाते। मन को सशक्त बनाना, उसमें सन्निहित क्षमताओं को सुविकसित करना तो दूर, उसे स्वस्थ एवं संतुलित रखना भी कठिन पड़ता है। फलत: रुग्णता की स्थिति में वह विकृत आकांक्षाओं-इच्छाओं को ही जन्म देता है।

इच्छाएँ-आकांक्षाएँ मानवीय व्यक्ति की, स्वास्थ्य-संतुलन एवं विकास की प्रेरणा-स्रोत होती हैं। उनका स्तर निकृष्ट होने पर मनुष्य के चिंतन, चरित्र और व्यवहार में श्रेष्ठता की आशा भला कैसे की जा सकती है? रुग्ण मानस रुग्ण समाज को ही जन्म देगा। मन रोगी हो, तो काया भी अपना स्वास्थ्य अधिक दिनों तक स्थिर नहीं रख सकती। ❑

आडंबर रहित जीवन जिएँ

जीवन में कठिनाइयाँ तथा मुसीबतें तब पैदा होती हैं, जब मनुष्य उसे जटिल, दुरूह और अधिक आंडबरपूर्ण बना लिया करता है। जीवन की सरलता ही सुखद है। व्यवहार में सरलता, विचार और आचरण में स्पष्टता बनी रहे तो मनुष्य के जीवन में कहीं कुछ भी कठिनाइयाँ, परेशानियाँ नहीं हैं।

सरलता का अर्थ विश्व को ऐसे रूप में निदर्शन करना है, जिसमें वह यथार्थ हो। यथार्थ परिस्थिति से भिन्न रूप बनाना ही जटिलता पैदा करता है; इसी से मुसीबतों का जन्म होता है। क्या आपने उस क्लर्क की कहानी पढ़ी है, जिसने अपनी धर्मपत्नी पर अपनी आत्मश्लाघा के फलस्वरूप अपना वास्तविक रूप प्रकट नहीं किया ? अधिक आय बताकर उसने दांपत्य जीवन में खाई पैदा कर ली। किसी विवाहोत्सव में सम्मिलित होने के लिए पत्नी ने हार की याचना की, जिसे वह क्लर्क पूरा नहीं कर सकता था। किंतु अपनी महत्त्वाकांक्षा छिपाने के लिए किसी परिचित से हार माँगकर अपनी धर्मपत्नी की इच्छा पूरी की। घटनावश वह हार उत्सव में खो जाता है और उसकी कीमत चुकाने में उस क्लर्क को अपनी आय का आधा हिस्सा प्रतिमास देना पड़ता है। आधी आय से उन्हें नितांत गरीब का-सा अभावग्रस्त जीवन जीना पड़ता है।

आज ऐसी ही कहानियाँ सर्वत्र देखने को मिल सकती हैं। साधारण जीवन-व्यवहार से लेकर उत्सवों, विवाहों, पर्वों पर विद्यार्थी जीवन से लेकर सामाजिक व्यवहार तक सब जगह अस्पष्टता के दर्शन होते हैं। जिसकी आय प्रतिदिन 200 रुपये है, वह उसे छिपाकर 500 रुपये बताने में अधिक गौरव मानता है। घर की माली हालत अच्छी नहीं है, पर बाहर निकलने के लिए वह सुसज्जित वेशभूषा चाहता है। इस जटिलता के कारण पारिवारिक जीवन में, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में अनेक समस्याएँ खड़ी होती हैं और मनुष्य का जीवन भारस्वरूप हो जाता है। उनसे न खुद को कोई प्रसन्नता होती है, न औरों को। दांपत्य जीवन में विद्वेष, पारिवारिक जीवन में कलह तथा कटुता, व्यक्तिगत जीवन में ऊब, उत्तेजना, अव्यवस्था, खरचे की तंगी, बच्चों की शिक्षा का पूरा न कर पाना आदि अनेक कठिनाइयाँ केवल इसलिए खड़ी हो रही हैं कि मनुष्य जिस स्थिति में है, उसे बहुत अधिक बढ़-चढ़कर अपने आप को व्यक्त करना चाहता है। यह बनावटीपन जहाँ भी पैदा होगा, वहाँ के जीवन में भोंड़ापन अवश्य आएगा। उसके फलस्वरूप मनुष्य का जीवन कठिनाइयों, चिंताओं तथा दुरूहताओं में ही फँसता चला जाएगा।

मनुष्य का यह अहंभाव यदि समाप्त हो जाता है, तो वह अपने सरल जीवन में आ जाता है। सोचा जाए कि इसमें उसे कुछ हानि नहीं होती। लोग छोटा मानेंगे ऐसी बात नहीं। ऋषियों के जीवन में बड़ी सादगी और सरलता थी, इस

कारण उनका गौरव सर्वमान्य ही है। दरअसल बनावटीपन, शेखीखोरी तथा अहंभावना की निंदा की जाती है। नकली चेहरा लगाकर आने वालों पर ही संसार हँसता है। जिसके अंदर सार्वभौम यथार्थता निर्दोष बनकर प्रतिबिंबित होती है, उसका जीवन आदर्श एवं अनुकरणीय होता है। वह जाग्रत हो जाता है और दूसरों के लिए नमूना बनता है। उसकी अनेक परेशानी उससे दूर रहती है और वह मस्ती का जीवन बिताता है।

जिसे हम स्वाभिमान या आत्माभिमान कहते हैं, वह इसी जीवन की सरलता का परिणाम है। हम जिस स्थिति में हैं, उसी में संतुष्ट रहें, तो दूसरों के आगे न हाथ फैलाना पड़े और न सहायता माँगनी पड़े। आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ केवल इसीलिए जाग्रत नहीं होतीं; क्योंकि लोगों को बाहरी बनावट से ही फुरसत नहीं मिलती। गुणों का विकास भी इसीलिए नहीं होता; क्योंकि लोग अपने आप को बढ़ा-चढ़ाकर प्रदर्शित करने में ही जीवन की सफलता मानते हैं और इसमें जिसको जितना सम्मान मिल जाता है, उसी में गर्व और संतोष का अनुभव कर लेते हैं। बुद्धि का जो भाग जीवन-विकास और आध्यात्मिक शक्तियों के जागरण में लगना चाहिए था, वह बाह्य विडंबना और आत्मप्रतारणा में ही बीतता रहता है। बौद्धिक स्तर का इससे विकास भले ही हो जाए, किंतु आत्मिक स्तर दिन-दिन गिरता जाता है। नैतिक दृष्टि से ऐसे व्यक्तियों को पिछड़ा हुआ ही मानना चाहिए।

आहार-विहार, रहन-सहन, वेशभूषा, विचार तथा जीवन-निर्माण में मौलिक सरलता का समावेश होना आवश्यक है। आत्मा की आंतरिक स्फुरणा के साथ मनुष्य विकसित हो, यह उसकी मूल आवश्यकता है। उसके जीवन में स्नेह, प्रेम, आत्मीयता, दया करुणा, उदारता, सौमनस्यता तथा सहिष्णुता का आदान-प्रदान बना रहे, इसके लिए यह आवश्यक है कि उसका जीवन शुद्ध और सरल बना रहे। इससे उसका मनोबल क्षीण न होगा। वह हतोत्साह, परावलंबी तथा उदासीन न होगा। उसके जीवन में निरंतर एक ऐसी दैवीप्रतिभा का विकास होता रहेगा, जिसकी समीपता में उसके उपर्युक्त मानवीय गुण फलते-फूलते तथा अभिसिंचित होते रहेंगे।

जटिलता जीवनवृत्तियों को बाह्योपचारों में लगाती है, सरलता आत्मिक स्तर को, अंतःकरण को विशाल बनाती है। सत्य का व्यावहारिक स्वरूप सरलता है। इससे मनुष्य का हृदय विस्तीर्ण होता है, भावनाएँ परिष्कृत होती हैं; जैसे-जैसे उसकी वृत्तियाँ अंतःवर्ती होती जाती हैं, वैसे-ही-वैसे वह संसार को भी अत्यंत स्वच्छ और स्पष्ट रूप में देखने लगता है। संसार के सच्चे रूप को देखना ही आत्मा की मूल आवश्यकता है। मनुष्य के जीवन में जब मिथ्या अंहकार तथा खोखलापन आता है, तभी उसे सत्य की वास्तविकता से विभ्रम होता है और वह नास्तिकता के कूटचक्र में फँसकर जीवन को कठिन बना डालता है।

मानसिक अशांति का कारण क्या है? मनुष्य चाहते हैं कि संसार के सब पदार्थ अपने-अपने स्वभाव को छोड़कर उन्हीं की इच्छानुकूल बरताव करने लग जाएँ, परंतु पदार्थ ऐसा करने से लाचार हैं। वे जिन प्राकृतिक नियमों से बँधे हैं, उनका उल्लंघन नहीं कर सकते। इसलिए जब वे मनुष्य की इच्छापूर्ति नहीं करते, तभी वह दुःखी होने लगता है। भलाई तो इसमें थी

कि वह वस्तुओं के यथार्थस्वरूप को देखकर अपनी आवश्यकताओं को उनके अनुकूल बनाने का प्रयत्न करता। परंतु यह तभी संभव है, जब अपनी मानसिक वृत्तियों पर नियंत्रण किया जाए और उन्हें स्थिति की परिधि से बाहर न होने दिया जाए। इच्छाएँ, आकांक्षाएँ बढ़ें, इसमें हर्ज नहीं, पर वे साधनों के घेरे को तोड़कर बाहर न फैलने पाएँ, इतना ध्यान बना रहे तो कोई भी प्रगति अनर्थकारक न होगी। संपन्नता, शक्ति और समृद्धि हमारी शान तो है, किंतु वे यथार्थ होनी चाहिए। केवल प्रदर्शन मात्र न होना चाहिए। बाहरी एवं भीतरी साधन और विस्तार में पारस्परिक मेल-मिलाप बना रहे तो वह उन्नति सर्वांगीण कही जाएगी।

मौलिक सरलता इतनी सजीव होती है कि मनुष्य जब प्रत्येक वस्तु से अपना अधिकार छोड़ देता है और परिस्थितियों के साथ संयोग करता है, तभी उसे अपने भीतर का खोखलापन अनुभव हो जाता है और विनम्रता, धैर्य, करुणा तथा विवेक का जागरण होने लगता है। जटिलता तो केवल दुर्गुणों तथा पापवृत्तियों के कारण उत्पन्न होती है। अतः मनुष्य जब तक स्वयं पूर्ण जीवन शुद्ध और सरल न कर ले, उसे अपने मनोविकारों के शोधन-परिमार्जन में ही लगे रहना चाहिए। अंतःकरण में कलुष न रह जाए और बाह्य जीवन में दंभ न शेष बचे, उसी पुरुष का जीवन निश्चयात्मक शांति एवं दैवी प्रतिभा से ओत-प्रोत होता है।

जो लोग वृत्तियों के दास बनकर अपनी इच्छाओं की पूर्ति के प्रयत्नों में उचित-अनुचित का विचार नहीं करते, उनकी आत्मा दुर्बल रहती है। आवश्यक सामग्री के उपस्थित न होने पर उन्हें जैसा, जितना तीव्र दुःख होता है, उसकी प्रतिक्रिया औरों पर भी उसी गति से होती है। कपटता में अकेले एक व्यक्ति नहीं, अनेकों और भी संलग्न हो जाते हैं। इस दुःख में फँसकर लोग अनर्थ करने लगते हैं। अतः जीवन में जटिलताओं से छुटकारा पाने के लिए व्यक्ति को इच्छाओं की दासता को अस्वीकार करके औचित्य पर ध्यान देना चाहिए। □

मनुष्य बन गया और विधाता उसे धरती पर भेजने लगे तो भेजते हुए बोले—''पुत्र! तू मानव जीवन का उपयोग आत्मकल्याण के लिए ही करना।'' मनुष्य ने कहा—''जी प्रभु! पर आप मृत्यु आने से पूर्व चेतावनी जरूर दे देना।'' विधाता ने हामी भरी। पृथ्वी पर आते ही मनुष्य मात्र इंद्रियसुखों में रस लेने लगा। समय आया और वह परमधाम को गति कर गया।

वहाँ पहुँचकर उसने विधाता से कहा—''आपने वचन दिया था कि आप मृत्यु आने पर चेतावनी देंगे, पर मुझे तो ऐसा कोई संदेश नहीं मिला।'' विधाता बोले—''तेरी आँखों से दीखना, कानों से सुनना कम पड़ने लगा, हाथ-पैर कम काम करने लगे, पर तब भी तू उन्हें भूलकर सुखों में रस लेता रहा तो इसमें किसका दोष है ? यही तो तेरे लिए चेतावनी थी।''

व्यस्त रहिए, चिंता से छुटकारा पाइए

जिसे अपने जीवन में सुख-शांति की आकांक्षा है; जिसे उन्नति, विकास और सफलता की कामना है, उसे अपने सबसे घातक शत्रु 'चिंता' का त्याग कर देना चाहिए। मनुष्य की जिस शक्ति पर उन्नति, विकास और सफलता निर्भर रहती है, उसे यह चिंता की आग जलाकर भस्म कर देती है। अशक्त व्यक्ति जीवन में किसी प्रकार का श्रेय प्राप्त नहीं कर सकता। चिंता के त्याग से मनुष्य की बची हुई शक्ति उसके बड़े काम आ सकती है।

सामान्यतः लोगों की यही धारणा रहती है कि मनुष्य की चिंता का कारण उसके जीवन का कोई-न-कोई अभाव ही होता है। एक प्रकार से अभाव ही चिंता का रूप धारण कर लेता है। किंतु यदि इस विषय पर गहराई से विचार किया जाए तो पता चलेगा कि अभाव और चिंता दो भिन्न बातें हैं। अभाव की वेदना जहाँ क्रिया की प्रेरिका है, वहाँ चिंता मनुष्य को निष्क्रिय बना देती है। जिस अभाव की पूर्ति के बिना मनुष्य को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उसकी पूर्ति के लिए वह अवश्य प्रयत्नशील होगा। किंतु चिंता एक ऐसा असाध्य रोग है, जो मनुष्य के समग्र जीवन को प्रभावित करके किसी काम का नहीं रखती।

जो व्यग्रता अपने कारण को दूर करने के लिए क्रियाशील बनाए, वह उत्तरदायित्व की भावना ही है, चिंता नहीं। चिंता केवल उसी व्यग्रता को कहा जा सकता है, जो मनुष्य को अपने तक सीमित करके केवल सोचने और जलने के लिए मजबूर करे।

मनुष्य ने ज्यों-ज्यों विकास किया है, त्यों-त्यों उसकी आवश्यकताएँ बढ़ गई हैं, जिसके फलस्वरूप उसकी चिंताएँ भी बढ़ गई हैं। जीवन की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को कुछ-न-कुछ चिंता करनी ही होती है, किंतु इस चिंता को उस प्रकार की चिंता नहीं कहा जा सकता, जो किसी के जीवन को अभिशाप बनाकर रख देती है।

भोजन, वस्त्र आदि यद्यपि रोजमर्रा की बातें हैं, किंतु किसी-किसी के लिए ये साधारण बातें ही जीवन-समस्या बन जाती हैं। इनको लेकर वे इतने चिंतित रहा करते हैं कि विविध रोगों के शिकार बन जाते हैं। आँख, दाँत, कान आदि कमजोर कर लेते हैं, बाल पका लेते हैं और असमय में ही बूढ़े हो जाते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति चिंताशील स्वभाव के होते हैं। चिंता, उनका उत्तरदायित्व और यही एक व्यसन, व्याधि, प्यास और आवश्यकता बन जाती है। जब तक वे किसी बात को लेकर व्यग्र नहीं हो

होते, उन्हें चैन ही नहीं पड़ता। यदि ऐसे व्यक्तियों को व्यर्थ चिंता करने से रोका जाए तो वे एक मानसिक परेशानी अनुभव करते हैं। यही कारण है कि अधिक मना करने पर चिंताशील व्यक्ति कभी-कभी बुरा मान जाता है और सोचने लगता है कि अमुक व्यक्ति उसे उसके उत्तरदायित्व की भावना से विरत कर हानि चाहता है।

चिंताशील व्यक्ति बहुत कुछ कल्पनाशील ही होता है। किंतु उसकी कल्पना का लक्ष्य सृजनात्मक नहीं होता, ध्वंसात्मक होता है। जिस प्रकार प्रसन्नचेता व्यक्ति की कल्पनाएँ कला-कौशल, उन्नति, विकास आदि के मधुर स्वप्नों के चित्र बनाया करती हैं, उसी प्रकार चिंताशील व्यक्ति की कल्पनाएँ नहीं। ऐसे व्यक्तियों की कल्पनाएँ ऐसे ही मार्ग से चला करती हैं, जिनके बीच में आशंकाएँ, अमंगल, अनिष्ट, निराशा, असफलता, भय एवं भीरुता के गर्त-गह्वर पड़ा करते हैं।

आजीविका जैसी सहज समस्या को ही ले लिया जाए और एक चिंताशील व्यक्ति की तुलना निश्चिंत प्रवृत्ति के व्यक्ति से की जाए तो एक महान अंतर सामने आएगा। निश्चिंत प्रवृत्ति का व्यक्ति सोचेगा—आज नहीं तो कल जीविका अवश्य प्राप्त होगी। आज कहीं परिश्रम करके रोटी कमा लेंगे, कल किसी अच्छे स्थान पर पहुँच जाएँगे। परिश्रम एवं पुरुषार्थ के बल पर मैं अवश्य ही अच्छे साधन का प्रबंध कर लूँगा। मैं जीवन-रण में हारने अथवा पीछे हटने वाला नहीं हूँ। इसके विपरीत चिंताशील व्यक्ति सोचेगा—जब आज ही जीविका नहीं मिली तो कल कहाँ से आ जाएगी? मेरे पास जो कुछ है, उसके खतम होते ही मरने की नौबत आ जाएगी। मेरे मर जाने पर बीबी-बच्चों को कौन सहारा देगा? कौन उनके दुःख-सुख को पूछेगा? मैं बड़ा ही निकम्मा हूँ, हाय मेरे कारण ही मेरे बाल-बच्चे दर-दर की ठोकरें खाते फिरेंगे। मुझे कोई सहयोग क्यों देगा? मैं ही किसी के क्या काम आया हूँ? मेरा भाग्य खराब है, मेरा समय विपरीत है, मेरा जीवन व्यर्थ है आदि न जाने कितनी प्रकार की निराशाजन्य अनिष्टों की कल्पना करता-करता चिंताशील व्यक्ति अपने जीवन को अभिशाप बना लेता है और निकम्मा होकर उसी की ज्वाला में जला करता है।

एक छोटी-सी चिंता जब इतने अनिष्टों को जन्म दे सकती है, तब क्या चिंता को एक क्षण के लिए भी अपने पास रखना बुद्धिमानी है? जो व्यक्ति चिंताओं को आश्रय देता है, वह अपने जीवन में अँगार बिखेरने के सिवाय और कुछ नहीं करता। चिंतित व्यक्ति स्वयं अपने लिए अपना शत्रु होता है।

जिन्हें आत्मकल्याण की कामना है, जीवन में उन्नति और विकास की आकांक्षा है, उन्हें निरर्थक चिंताओं से मुक्त रहकर पुरुषार्थ करना चाहिए। जिस प्रकार हाथ-पैर बँधा हुआ व्यक्ति एक छोटी-सी नदी को तैरकर पार नहीं कर सकता, उसी प्रकार चिंताग्रस्त आदमी छोटी-से-छोटी समस्या से भी निस्तार नहीं पा सकता।

चिंताओं से मुक्ति का एकमात्र उपाय है—हर समय काम में लगा रहना। निठल्ले व्यक्ति को ही चिंता जैसी पिशाचिनी घेरती है। जो

व्यक्ति कार्यरत है, प्रगतिशील है, चिंताएँ उसे किसी प्रकार भी नहीं घेर सकतीं। चिंताओं का जन्म-स्थान एवं निवास-स्थान दोनों में ही मनुष्य का 'चित्त' होता है। यदि मनुष्य का चित्त किसी कार्य में व्यस्त रहे तो चिंताओं का जन्म ही न हो सके। सकारात्मक सोच ही चिंताओं से बचने और प्रगतिशील जीवन पथ पर बढ़ते रहने का एकमात्र उपाय-उपचार है। ❑

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो आजीवन सदस्य रुपये 150 (सन् 1987) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 12 (सन् 1987) से बढ़कर रुपये 150 हो गया है— भविष्य में और भी बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 3000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। युग निर्माण योजना का आलोक आपको एवं अन्य परिजनों को आलोकित करता रहेगा।

इसके लिए हम आपके समक्ष निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/से RTGS/NEFT भेजी जा सकती है।

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 150/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने, युग निर्माण योजना भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र-व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पूरा पता, फोन नंबर, ई-मेल आई.डी. का उल्लेख अवश्य करें। पूर्ण विवरण के साथ अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें। गायत्री तपोभूमि का वाट्सअप नं. 7055514422 भी उपलब्ध है आवश्यकतानुसार वाट्सअप नं. का भी उपयोग कर सकते हैं।

पारिवारिक शिक्षा की अनिवार्यता

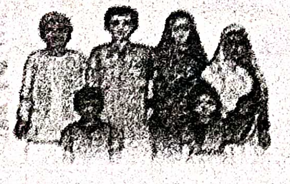

बच्चों के बढ़ने के साथ ही माँ-बाप के हृदय में उनका विवाह करके घर बसाने की, सुख-समृद्ध बनाने की बड़ी-बड़ी कल्पनाएँ उठने लगती हैं। माँ सोचती है—''नई बहू का मुँह देखकर कब सौभाग्यवान बनूँगी ?'' उधर पिता भी सोचते हैं—''नई बहू आकर घर को स्वर्ग बनाएगी।'' घर का प्रत्येक सदस्य नई बहू के लिए किसी-न-किसी सुखद कल्पना में अवश्य खोया रहता है। स्वयं लड़के-लड़कियाँ भी संसार के अनुभवों से शून्य अपनी मधुर कल्पनाओं में कुछ कम खोए-खोए नहीं रहते। कई तो इस संबंध में अनजान भी रहते हैं। माँ-बाप की लालसा तीव्र हुई कि झट से संबंध तय हो जाते हैं। बाजे बजते हैं। उत्सव मनाया जाता है। शहनाइयाँ गूँजती हैं और धूम-धाम के साथ विवाह-आयोजन संपन्न होते हैं। नई बहू घर में आती है।

समय के बीतने के साथ ही नई बहू का आकर्षण भी कम होने लगता है। कुछ ही समय बीतता है कि कई बातें ऐसी पैदा हो जाती हैं, जिनसे सास-बहू में खटकने लगती है। परस्पर ताने, फटकारें, दुर्वचनों का व्यवहार होने लगता है। घर की बेटी भी अपनी माँ का पक्ष लेकर उस बहू पर बरसती है।

रात-दिन घर में होने वाली चक-चक जो पहले नहीं होती थी, उसका कारण बहू को समझकर कुलपति श्वसुर भी बहू और उसके कुल की बुराइयाँ बखानने लगते हैं। स्त्री और बेटी द्वारा कान भर देने पर तो उनकी स्थिति और भी असंतुलित हो जाती है।

गृहकलह, माँ-बाप द्वारा आरोप-प्रत्यारोप, उधर बहू द्वारा अपने कष्टों की शिकायत सुनकर युवक भी परेशान हो जाता है। वह दोनों ही पक्षों से अनन्यता के नाते कुछ कह नहीं सकता। समय के बीतने के साथ ही रात-दिन की अशांति से वह और भी अधिक असंतुलित हो जाता है। माँ-बाप अथवा बहू पर अपनी अशांति प्रकट करता है।

उधर बहू भी जो अपने माता-पिता, भाई-बहन, घरवालों से बिछड़कर पतिगृह में सुख के स्वर्णिम स्वप्न लेकर आई थी, वह यह सब देखकर घबरा जाती है। पतिगृह में चारों ओर से बरसने वाली गालियाँ, तिरस्कार, आरोप-प्रत्यारोप, आलोचनाएँ, तिरस्कार आदि उसके धैर्य को विचलित कर देते हैं। संसार की कठोरता से अनजान, अज्ञ, कोमल, भावनाशील युवती इन परिस्थितियों में अधिक दिन संतुलित नहीं रह पाती और एक-न-एक दिन उसका मानस उद्वेलित हो उठता है। अपने स्वातंत्र्य, मौलिक अधिकार, माँ-बाप के गौरव, स्वाभिमान पर चोट पड़ने से उसकी कोमल भावनाएँ कठोर और विद्रोही बन जाती हैं और फिर उसका उद्वेलित मानस गृहकलह की आग में घी का काम देता है। कई तेज मिजाज बहुएँ तो बड़ी लड़ाका और रौद्र रूप बन जाती हैं। सारे घर की शांति काफूर हो जाती है। जो बहुएँ बहुत ही

संकोची और सुशीला होती हैं, वे चिंता, क्लेश, अवसाद मानसिक घुटन में घुल-घुलकर अपना जीवन नष्ट कर लेती हैं। कई विक्षिप्त हो जाती हैं तो कई अन्य माध्यमों से अपने जीवन की इतिश्री तक कर लेती हैं। इन सभी परिस्थितियों में हमारे गृहस्थ जीवन की दुर्दशा, पतन, विनाश निश्चित है। अनेक गृहस्थियाँ इसी कारणवश उजड़ती, नष्ट-भ्रष्ट होती देखी जा सकती हैं।

गृहस्थ जीवन की इस दुर्दशा से अधिकांश परिवार ग्रस्त हैं। परस्पर कलह, लड़ाई-झगड़े मनमुटाव, परस्पर आरोप-प्रत्यारोप, दोषारोपण, मतभेद आदि की विषवेल ने परिवार के सभी सदस्यों को जकड़ लिया है। जिससे हमारे पारिवारिक जीवन की सुख-समृद्धि उन्नति-प्रगति का मार्ग अवरुद्ध हो गया है। गृहस्थ जीवन की इस दुर्दशा ने व्यक्ति की शक्तियों को नष्ट कर उसे पंगु बना दिया है। जीवित होते हुए भी वह गृहकलह के विषदंश से पीड़ित होकर निर्जीव-सा बनता जा रहा है। निराशा, उदासी, मानसिक घुटन में घुल-घुलकर उसका जीवन नष्ट होता जा रहा है।

व्यक्ति से ही समाज और समाज से ही राष्ट्र बनते हैं। ऐसा व्यक्ति समाज और राष्ट्र के निर्माण में क्या योग दे सकता है? गृहस्थ जीवन, जिसके ऊपर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की स्थिति निर्भर है, उसकी इस दुर्दशा का समाधान किए बिना सुख-शांति, उन्नति, विकास की कल्पना करना एक विडंबना होगी। जो व्यक्ति गृहस्थ जीवन की दुर्घटनाग्रस्त गाड़ी के मलबे में दबा हुआ सिसक रहा है; वेदना से छटपटा रहा है, वह समाज अथवा राष्ट्र के कल्याण के लिए सोच ही क्या सकता है? और क्या कर सकता है?

गृहस्थ जीवन की इस दुर्दशा के लिए प्रायः परिवार के सभी सदस्य किसी-न-किसी रूप में जिम्मेदार होते हैं। कोई कम कोई अधिक। बहू के घर में आ जाने पर दरअसल सास के व्यक्तित्व और अधिकारों में कुछ कमी अवश्य हो जाती है। पहले अकेली सास ही घर की मालकिन कर्त्ता-धर्त्ता थीं, अब उसमें बहू का व्यक्तित्व भी हिस्सेदार बन गया। घर के सदस्यों का, खासकर लड़का जिसका स्नेह-केंद्र माँ ही थी, अब उसका ध्यान पत्नी की ओर भी बढ़ने लग जाता है। घर के अन्य लोगों का भी आकर्षण केंद्र नई बहू बन जाती है। इस तरह अपने अधिकार और व्यक्तित्व का क्षेत्र घट जाने का कारण बहू को समझकर सास उसे विभिन्न तौर-तरीकों से तंग करने लगती है। बात-बात में जबरन अपना अधिकार जताने लगती है। ताने, फटकार, अपमान करके अपना असंतोष कई बहानों से प्रकट करने लगती है। सब जगह बहू की बुराई, शिकायत करती है। उधर माँ-बाप के घर में लाड़-प्यार स्वतंत्रता का मधुर जीवन बिताकर आई हुई बहू को यह सब असह्य होने लगता है और परस्पर संघर्ष की जड़ें और गहरी होने लगती हैं।

कई घरों में जहाँ बहू के बच्चे नहीं होते तो उसे तिरस्कार-अपमान का भागी बनना पड़ता है। उसे बाँझ कहकर अपमानित किया जाता है; गालियाँ दी जाती हैं। इतना ही नहीं, लड़के का दूसरा विवाह करने की तैयारी तक भी की जाती है। ऐसी स्थिति में उस बहू का क्या हाल होगा, जो बेचारी अपने माँ-बाप, भाई-बहन को छोड़कर पतिगृह में आई है?

बहुएँ भी कोई दूध की धुली नहीं होतीं। बहुओं में बढ़ता हुआ स्वच्छंदतावाद,

अनुशासनहीनता, मनमरजी, बड़ों के प्रति आदरभाव में कमी, लापरवाही, नारी-सुलभ लज्जाशीलता का त्याग जो भारतीय परिवार के प्रतिकूल हैं; गृहकलह के लिए बहुत कुछ जिम्मेदार हैं। आज पारिवारिक जीवन की विशृंखलता और टूटने का एक कारण यह भी है, जो बहू अपनी सहनशीलता, सेवा-त्याग से सारे परिवार को स्नेहसूत्र में बाँधे रहती थी, वह परिवार का तनिक भी बोझ उठाने को तैयार नहीं होती; आने के साथ ही पति को बहकाकर अपना न्यारा घर बसाने की योजना बनाती है।

पारिवारिक जीवन की गाड़ी सदस्यों के त्याग, प्रेम, स्नेह उदारता, सेवा, सहिष्णुता और परस्पर आदरभाव पर चलती है। परिवार सह-अस्तित्व, सामूहिक जीवन, सेवा और सहिष्णुता की पाठशाला मानी गई है। किंतु परस्पर के संबंध स्वार्थपूर्ण, आपापूती, संकीर्णता, असहिष्णुता से भर जाते हैं, तो परिवार नरक की साक्षात् अभिव्यक्ति के रूप में परिणत हो जाते हैं।

देखा जाता है कि बहू-बेटे के योग्य और वयस्क हो जाने पर भी बहुत-से घरों में उन्हें परतंत्र की तरह रखा जाता है। अभिभावकगण जिन्हें गृहस्थ की जिम्मेदारियाँ युवा बच्चों को सौंपकर उच्च आदर्शों के लिए अपने आप को लगाना चाहिए; वे अंत तक भी घर के वातावरण में लिप्त रहते हैं। युवा बहू-बेटों को परतंत्रता का जीवन अच्छा नहीं लगता। इससे पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी में पस्पर मनोमालिन्य, अनादर के भाव पैदा हो जाते हैं।

पारिवारिक जीवन की दुर्दशा का मुख्य कारण है—व्यावहारिक जीवन की शिक्षा का अभाव। लड़के और लड़कियों को अनुभवी, वृद्ध गुरुजनों के संपर्क में रहकर व्यावहारिक जीवन में जीने की जो शिक्षा मिलनी चाहिए, उसका आजकल सर्वथा अभाव है। विवाह से पहले कन्या को यह शिक्षा नहीं मिलती कि उसे पतिगृह में आकर कैसे जीवनयापन करना है? उसका कर्त्तव्य व उत्तरदायित्व क्या है? उसे किन-किन सद्गुणों के द्वारा परिवार की गाड़ी को चलाना है। यही बात लड़कों के संबंध में भी है। पारिवारिक जीवन की शिक्षा का अभाव ही गृहस्थ जीवन की दुर्दशा का मूल कारण है, जिसे दूर किया ही जाना चाहिए। ☐

एक महात्मा के पास एक व्यक्ति ने आकर पूछा—''महात्मन्! आप जीव और ईश्वर में एक ही चैतन्य का वास बताते हैं, परंतु ईश्वर के समान जीव सर्वज्ञ क्यों नहीं होता?'' महात्मा ने एक लोटा जल गंगाजी से लाने की आज्ञा दी। वह व्यक्ति एक लोटा जल लाया तो महात्मा बोले—''बच्चा! गंगाजी में जहाज चलते हैं, इसमें क्यों नहीं चलते?'' वह बोला—''गंगाजी में अथाह पानी है, लोटे में तो जहाज आवेगा ही नहीं।'' महात्मा ने समझाया—''इसी प्रकार जीवात्मा में थोड़े और ईश्वर में अनंत गुण हैं।'' आत्मा के भीतर जो ईश्वरीय गुण हैं, उनका विकास कर श्रेष्ठ जीवन जिए, यही प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है।

गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण

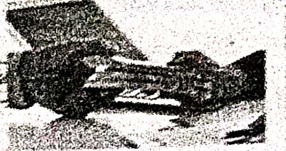

1. धर्मार्थ दान गायत्री मंदिर :
   - दैनिक व्यवस्था, संस्कार
   - अखण्ड दीप, पर्व-त्योहार
   - अनुष्ठान, विभिन्न प्रकार के शिविर
   - अन्नक्षेत्र (भोजन-व्यवस्था)
   - गायत्री मंदिर जीर्णोद्धार एवं पुनर्निर्माण

PAN-AAATG0704D

Bank A/C-Gayatri Mandir Trust,

★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA-0001441,
A/C No.-144102000000003,

★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE** - PUNB0497600
A/C No. - 4976005700000080

★**SBI Branch :** Vrindavan Gate, Mandi Ram Das, Mathura, **IFSCODE** - SBIN0002503
A/C No. - 42593590624

★**YES Bank Branch :** Dampier Nagar, Mathura
IFSCODE - YESB0000072
A/C No. - 007288700000890

---

3. ○ गोशाला दान
   ○ प्राकृतिक चिकित्सा

PAN-AAATY2059 F

Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust,

★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA-0001441,
A/C No.-144102000002051,

Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (02)

★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE**-PUNB0497600
A/C No. - 4976005700000062

2. पुण्यार्थ दान :

○ युग निर्माण विद्यालय, सप्त क्रांति आंदोलन

○ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य पारमार्थिक चिकित्सालय में नि:शुल्क चिकित्सा शिविर, अन्नक्षेत्र (भोजन-व्यवस्था)

○ आपदा निवारण, चिकित्सा सुविधा एवं अन्य पारमार्थिक प्रयोजनों के लिए (दान की राशि पर आयकर अधिनियम की धारा 80G के अंतर्गत छूट प्राप्त है।) परिजनों को PAN भेजना अनिवार्य है।

PAN-AAATY0086E

Bank A/C-Yug Nirman Yojana Trust,

★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA-0001441,
A/C No.-144102000000002

★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE**-PUNB0497600
A/C No.-4976005700000053,

---

4. ○ युग निर्माण योजना (हिंदी) मासिक,
   ○ युग शक्ति गायत्री (गुजराती) मासिक,
   ○ साहित्य, हवन सामग्री, प्रचार सामग्री,
   ○ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

PAN-AAATY2059 F

Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust
(Prachar Khata)

★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA0001441,
A/C No.-144102000002021

Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (01)

★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE**-PUNB0497600
A/C No.-4976005700000071

Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust

★**SBI Branch :** Vrindavan Gate, Mandi Ram Das, Mathura, **IFSCODE** - SBIN0002503
A/C No. - 42597926175

E-Mail ID : yugnirman@yugnirmanyojna.org
Website : www.yugnirmanyojna.org

जन्मशताब्दी माताजी की

जन्मशताब्दी माताजी की, शक्ति-स्त्रोत श्रीराम की।
सफल करें हम दिव्य योजना, नवयुग के निर्माण की॥

हे जगज्जननी, मातु भगवती, परम शक्ति हो कल्याणी।
शिव की शक्ति मातु भवानी, ब्रह्मा की हो ब्रह्माणी।
निष्कलंक की बनी सहचरी, ज्ञानयज्ञ अभियान की।
सफल करें हम दिव्य योजना, नवयुग के निर्माण की॥

जिन संकल्पों को लेकर हम, प्रज्ञा-परिजन एक हुए।
माँ की ममता और स्नेह के, संबल से हम जुड़े हुए।
कर्मयोग की करें साधना, सेवाधर्म महान की।
सफल करें हम दिव्य योजना, नवयुग के निर्माण की॥

माताजी की जन्मशताब्दी, हम विशेष कुछ कर पाएँ।
ऐसा शुभ संकल्प सुदृढ़ कर, मिल-जुलकर इतिहास बनाएँ।
ज्ञानयज्ञ हित मातृशक्ति से, दिव्य स्त्रोत नव प्राण की।
सफल करें हम दिव्य योजना, नवयुग के निर्माण की॥

हम सबका सौभाग्य परम है, माताजी से जुड़ने का।
जनम जनम का पुण्य उदय है, भव सागर से तरने का।
माँ के सम्मुख शपथ हमारी चलें राह हम आपकी।
सफल करें हम दिव्य योजना, नवयुग के निर्माण की॥

सजल श्रद्धा माँ स्वरूप है, छाया और सहारा है।
शक्ति-स्त्रोत ममता की मूरत, ज्ञान गंग की धारा है।
नहीं रुकेंगे—कर्म करेंगे, मातृशक्ति वरदान की।
सफल करें हम दिव्य योजना, नवयुग के निर्माण की॥

—अशोक पांडेय

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

हेमाद्रि संकल्प, दस स्नान एवं रक्षाबंधन पर्व

युग निर्माण योजना

(मासिक) R.N.I No. 13636/64

Regd No. Mathura-024/2024-2026
Licensed to Post Without Prepayment
No. Agra/WPP-10/2024-2026

प्राणवान कार्यकर्ता शिविर

स्कैन करें

(वेबसाइट) (यूट्यूब) (फेसबुक) (इंस्टाग्राम) (व्हाट्सऐप) (एक्स)

स्वामी युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा के लिए मृत्युंजय शर्मा द्वारा युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा से प्रकाशित तथा युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा से मुद्रित। संपादक– ईश्वर शरण पाण्डेय, सह संपादक–सूर्यमणि तिवारी, दीनदयाल अमृते
दूरभाष नंबर–(0565) 2530115, 2530399, 2530128, मो.– 09927086289, 09927086287
E-Mail: yugnirman@yugnirmanyojna.org Website: www.yugnirmanyojna.org